ओ३म्

संशोधित संस्करण

मांसाहार

धर्म, अर्थ और विज्ञान के आलोक में

लेखक

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

सम्पादक

विशाल आर्य

(M.Sc. Theoretical Physics)

प्रकाशक

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास

(वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान)

वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम, भीनमाल जिला-जालोर

(राजस्थान) पिन- 343029

अनुक्रमणिका

सम्मति

माननीय ऋषिकल्प मुनि श्री अग्निव्रत जी द्वारा रचित **'मांसाहार (धर्म, अर्थ और विज्ञान के आलोक में)'** पुस्तक का मैंने आद्योपान्त अध्ययन किया। आचार्य जी ने सब दृष्टियों से मांसाहार की मानव के लिए अनुपयोगिता दर्शायी और मिस्टर फारुख के द्वारा दिए गए अर्धसत्ययुक्त तर्कों का विवेचनात्मक खण्डन कर दिया है। मैं आशा करता हूँ कि इस पुस्तक को पढ़ने के बाद कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति मांसाहार, मत्स्याहार, अंडाहार आदि अभक्ष्य पदार्थों का कभी सेवन नहीं करेगा। आवश्यकता इस बात की है कि इन बातों का सभी बुद्धिमान् मनुष्य अधिक से अधिक प्रचार करें और अधिकाधिक मनुष्यों को सुधारकर शाकाहारसेवी बनाने का प्रयास करें।

–**आचार्य सत्यानन्द वेदवदगीश**
महर्षि दयानन्द स्मृति भवन, जोधपुर

सम्पादकीय

बुद्धि वह वस्तु है, जो मनुष्य को पशुओं से अलग बनाती है। परमपिता परमात्मा ने मनुष्य को संसार का सबसे बुद्धिमान् प्राणी बनाया। इससे हमारा उत्तरदायित्व बन जाता है कि हम अन्य प्राणियों व पर्यावरण को सुरक्षित करें। परमात्मा ने मनुष्य के भोजन के लिए नाना प्रकार के फल, दूध, सब्जी, मेवे आदि स्वादिष्ठ एवं स्वास्थ्यवर्धक पदार्थ बनाये। परन्तु निर्दयी मनुष्य ने अपनी जिह्वा की तृप्ति के लिए अनेकों निर्दोष, निरीह प्राणियों को ही खाना प्रारम्भ कर दिया।

कुछ तथाकथित प्रबुद्ध महानुभाव भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा वैदिक धर्म को नष्ट करने के लिए मांसाहार जैसे पाप को वैज्ञानिक सिद्ध करने का प्रयास करते रहते हैं। कोई खाने की स्वतंत्रता के नाम पर, कोई वैज्ञानिक व आर्थिक तर्क देकर, तो कोई यह कहकर कि हम इन्हें नहीं खाएँगे, तो जानवरों की संख्या बहुत बढ़ जाएगी, मांसाहार का समर्थन करते हैं। ऐसे ही एक महानुभाव हैं, मोहम्मद फारुख खांजी, जिन्होंने 'दया व मांसाहार' नाम वाली एक लघु पुस्तिका लिखी थी, जिसमें उन्होंने मांसाहार के पक्ष में वैज्ञानिक तर्क देने का असफल प्रयास किया। इन सबके उत्तर में आचार्य जी ने 'मांसाहार- धर्म, अर्थ एवं विज्ञान के आलोक में' पुस्तक लिखकर उनको तर्कपूर्ण उत्तर दिया था। इसमें इन्होंने उनके हर एक तर्कों की धज्जियां उड़ा दीं। अब उसी पुस्तक का संशोधित संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें कुछ नए अध्याय, आचार्य जी के स्वयं के मंत्रों के भाष्य जोड़ कर एक नया रूप देने का प्रयास किया गया है।

कुछ तथाकथित ब्राह्मणों अथवा वेद विरोधियों ने हमारे कुछ आर्ष ग्रंथों में मिलावट कर दी तथा ग्रंथों को न समझने से उनके

गलत अर्थ कर दिए, इसी कारण आर्ष ग्रंथों में कहीं-२ मांसाहार के प्रकरण देखने को मिलते हैं। वेद-विरोधी लोग इसी बात का लाभ उठाकर इन महान् ग्रंथों पर आक्षेप लगाते हैं। आर्ष ग्रंथों पर ऐसे आरोप का खंडन भी इस पुस्तक में देखने को मिलेगा।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक को पढ़ कर लोग भ्रमित होने से बचेंगे तथा सभी बुद्धिमान् एवं सभ्य महानुभाव मांस, मछली, अंडे आदि अभक्ष्य पदार्थों का त्याग करेंगे, जिससे मानव जाति अनेकों रोगों से मुक्त होगी, पर्यावरण शुद्ध होगा और प्राकृतिक प्रकोप भी कम होंगे। हम मूक जीवों को जीने दें तथा संसार में दया, करुणा जैसे मानवीय गुणों को बढ़ाएं, इसी से विश्व में शान्ति एवं आनन्द का वातावरण होगा। आशा है इस पुस्तक को पढ़ कर प्रबुद्ध पाठक गम्भीरता से विचारेंगे। इसी आशा के साथ

विशाल आर्य (अग्नियश वेदार्थी), उपाचार्य
M.Sc. Theoretical Physics (University of Delhi)
वैदिक एवं आधुनिक भौतिकी शोध संस्थान

भूमिका

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा प्रेषित इस्लामी साहित्य प्रकाशन, दोवत मंजिल, कालूपुर टावर के पास, अहमदाबाद-1 द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, श्री इकबाल मीरझा द्वारा हिन्दी में अनूदित तथा श्रीमान् मुहम्मद फारुख खां जी द्वारा लिखित **''दयाभाव और मांसाहार''** नामक 14 पृष्ठीय लेख पढ़ने को मिला। लेखक ने बड़े परिश्रम से लेख तैयार किया है, कुछ अच्छी युक्तियां तथा वैज्ञानिकता का भी प्रभावी समावेश है। सम्भवतः मांसाहार के समर्थन में इससे अच्छे लेख पढ़ने को कम ही मिलें परन्तु वैदिक विचारों की यथार्थता एवं सत्य ग्रहण की इच्छा तथा मिथ्या के परित्याग की भावना दिखाई नहीं देती। इस कारण लेख विज्ञान को समेटे हुये तथा वैदिक वाङ्मय के स्वाध्याय का प्रदर्शक होते हुये भी अज्ञानता, अवैदिकता तथा असफल तर्कों का पिटारा मात्र बनकर रह गया है। काश! ऐसा न होकर लेख पूर्ण यथार्थवादी तथा दुराग्रह- मुक्त होता, तो बड़ा आनन्द आता। लेखक महोदय से निवेदन है कि स्वयं को इस्लाम के कुएं से बाहर निकालकर मानवता के खुले वातावरण में आकर निष्पक्ष व उदार हृदय एवं वैज्ञानिक मस्तिष्क के असत्य के परित्याग तथा सत्य के ग्रहण के लिये उद्यत होवें, जिससे मजहबी मनभेद एवं मतभेद दूर होकर मानव एकता का मार्ग प्रशस्त हो सके। मैं इस पुनीत कार्य में आपके साथ हूँ।

मैं इस लघु पुस्तिका, जो विशेषकर श्री मुहम्मद फारुख खां जी के लेख के उत्तर में लिखी गयी है, के माध्यम से विश्व के समस्त महानुभावों, जो मांसाहार वा अण्डाहार को लाभदायक तथा वैज्ञानिक व आर्थिक दृष्टिकोण से उचित व आवश्यक मानते व प्रचारित करते हैं, तथा वैदिक काल में मांसाहार के प्रचलन व ऋषियों व क्षत्रिय राजाओं के मांसाहारी होने का प्रचार करते हैं, से विनम्र निवेदन करता हूँ कि **वे अपने मन, मस्तिष्क व हृदय के दूषित दुराग्रहग्रस्त वा बन्द कपाटों को खोलकर सत्य, न्याय, यथार्थ विज्ञान मानवता आदि के प्रकाश में ही सोचने व देखने का स्वभाव बनायें तथा सभी प्राणियों में हमारे जैसा ही आत्मा है, जो हमारी**

भाँति ही सुख वा दुःख अनुभव करता है, यह सत्य कभी नहीं भूलें। सभी निष्पक्षता से इस पुस्तिका की विषय वस्तु पर गम्भीरता से मनन चिन्तन करके सत्य व हितकारी पक्ष का ही ग्रहण करें व करावें, जिससे वे सच्चे अर्थों में मानव कहलाने के अधिकारी हो सकें।

भूमिका विस्तार को विराम देकर लेख की संक्षिप्त समीक्षा पर आते हैं। आपने लेख के प्रारम्भ में मांसाहार को अनुचित मानने वालों को तुच्छ व चिन्तनहीन बताते हुये लिखा है–

'यह एक ऐसा दृष्टिकोण है कि जो सिर्फ उन लोगों के विचारों को अपनी ओर आकृष्ट कर सकता है, जो कि विचार करने के योग्य, समझने योग्य और चिन्तन करने की आदत वाले न हों।'

समीक्षा– आपकी दृष्टि में मांसाहार का समर्थक ही समझदार, चिन्तक एवं विचारक हो सकता है। इसकी परीक्षा इस लेख में ही हो जायेगी। आजीविका और आर्थिक दृष्टिकोण द्वारा मांस का स्थान शीर्षक के अन्तर्गत **आप लिखते हैं–**

'यदि दया और न्याय के इस दृष्टिकोण को मान लिया जाये, तब संसार में मानव का जीवित रहना मुश्किल हो जायेगा–संसार में ज्यादातर मनुष्यों में जीवन का आधार मांस पर टिका हुआ है।'

आपने यूरोप, अमरीका, जापान, चीन आदि देशों में व्यापक मांस उत्पादन तथा मत्स्य उद्योग की चर्चा की है। ग्रीनलैण्ड देश तथा एस्किमो लोगों में अनिवार्य मांस व मत्स्य आहार की चर्चा की है। इसके अतिरिक्त चर्बी, चमड़ा से अर्थ प्राप्ति की भी चर्चा की है।

समीक्षा– महानुभाव आपका कथन है कि मांसाहार छोड़ने से मनुष्य जाति का जीवित रहना कठिन हो जायेगा क्योंकि खाद्यान्न संकट बढ़ जायेगा, परन्तु वास्तविकता यह है कि मांसाहार छोड़ने से खाद्यान्न इतना बढ़ जायेगा कि मनुष्य जाति खा भी नहीं सकेगी। जिन देशों की चर्चा की है उनमें से अधिकांश देश खाद्यान्न, फल

तथा दूध उत्पादन में अग्रणी हैं पुनरपि मांस मछली जैसे गन्दे अभक्ष्य पदार्थ खावें, तो उनकी मति की भ्रष्टता ही कही जायेगी। अमरीका स्वयं कम जनसंख्या वाला देश होते हुए भी गेहूँ उत्पादन के क्षेत्र में उन्नत देश है, तब मांस मछली खाना क्या भूख मिटाने के लिये किया जाता है? क्यों वह अभागा देश अपना 70 प्रतिशत अन्न वहां पशुओं को मांसोत्पादन हेतु खिलाता है। यदि वह मांसोत्पादन को बन्द कर दे, तो विश्व की प्रोटीन की आवश्यकता पूरी हो सकती हैं।

मांसाहार एवं अर्थशास्त्र

फ्रांसीसी महिला वैज्ञानिक **'डायट फॉर स्मॉल प्लेनेट्स'** पुस्तक में लिखती है–

प्रोटीन के लिये मांसाहार कोरी मूर्खता है। अमेरिका जितना प्रोटीन मवेशियों को खिला देता है, उतने प्रोटीन से तो गरीब मुल्कों के अभावग्रस्त लोगों की समस्या हल हो सकती है। इस वैज्ञानिक के अनुसार औसतन एक बछड़ा 16 पौण्ड अनाज खाकर 1 पौण्ड मांस देता है। शेष 15 पौण्ड उसकी हड्डी,बाल आदि पर खर्च होता है। मांसाहार इस कारण खाद्यान्न संकट के हल का कर्त्ता नहीं बल्कि समस्या उत्पादक है। यदि सभी देश मांसाहार को पूर्णबन्द कर दें, तब विश्व में कोई भूखा नहीं रहेगा। न किसी को गन्दे खाद्य वास्तव में अखाद्य मछली आदि खाने की आवश्यकता रहेगी। एक अध्ययन के अनुसार 24 लाख टन मांस प्रोटीन हेतु 2 करोड़ टन वानस्पतिक प्रोटीन पशुओं को खिलाया जाता है। कहिये मुहम्मदजी! कैसा गणित आपने सीखा है? 1 रुपया पाने हेतु 10 रुपये खर्च करने की वकालत करते हैं पुनरपि लाभ की बात करते हैं। पशुओं को 1 किग्रा मांस के लिए 7 किग्रा अनाज खिलाया जाता हैं। इसमें 7000 लीटर पानी भी खर्च होता है। तब बढ़ती जनसंख्या एवं घोर जल संकट के दौर में कौन व्यक्ति मांसाहार के प्रोत्साहन की मूर्खता करके जल व खाद्य संकट को बढ़ाने का पाप

करेगा। एक अमरीकी अर्थशास्त्री के अनुसार 4 औंस वजनी हैम्बर्ग छोटी मुर्गी के पालने से 55 वर्ग फीट वन नष्ट होता है। कैलिफोर्निया में किये गये एक अध्ययन के अनुसार 1 पौण्ड उत्पादन में जल की खपत निम्नानुसार है - साग सब्जी 20 गैलन, गेहूँ 25 गैलन, सेव 49 गैलन, दूध 130 गैलन, अण्डा 500 गैलन, सूअर मांस 1030 गैलन, गोमांस 5219 गैलन आदि।

लन्दन के किंग्स कालेज के प्रोफेसर जॉन एंथोनी एलन के अनुसार 1 किग्रा गेहूं उत्पादन में लगभग 1 हजार लीटर, जबकि 1 किग्रा मांस में 15 हजार लीटर व एक किग्रा अण्डों में 3300 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। फिर मांसाहारी व्यंजन बनाने में भी शाकाहारी व्यंजन की अपेक्षा अधिक जल व्यय होता है।

देखिए अर्थशास्त्रिन्! आपके प्रियतम खाद्य गोमांस से सर्वाधिक हानि आर्थिक तथा पर्यावरण की दृष्टि से होती है। स्वास्थ्य विषय की चर्चा हम आगे करेंगे। जहाँ विश्व के पर्यावरणविद् पेयजल के घोर संकट की चेतावनी दे रहे हैं। पानी के लिए राष्ट्र व राज्यों में संघर्ष हो रहे हैं, कहीं-कहीं 1 मटके जल के लिए पड़ौसी-पड़ौसी लड़ मरते हैं। भूजल स्तर निरन्तर घातक रूप से गिरता जा रहा है। वहां आप ऐसे मांसाहारी बन्धु जीभ की लोलुपता के वश मांसाहार की वकालत कर पेयजल व वन का घोर संकट उत्पन्न करने का दोहरा पाप कर रहे हैं। आप जरा अपने इस भारत देश के लोगों की मूर्खता पर ही दृष्टि डालें। क्या आपने भारत में भूख से पीड़ित जन मांस खाते हैं अथवा जिह्वालोलुप व क्रूरता में आनन्द मानने वाले लोग? हमारा देश प्रतिवर्ष 21 करोड़ टन खाद्यान्न उत्पन्न करता है। प्रति व्यक्ति 500 ग्राम से अधिक अन्न प्राप्त कर सकता है। सरकारी गोदामों में अन्न सड़ रहा है। कितना ही अन्न मांसोत्पादक पशु पक्षी खा जाते हैं और लाखों एकड़ भूमि में चाय, कॉफी, तम्बाकू, भांग, गांजा, अफीम जैसे विषों की कृषि यहाँ का मूर्ख कृषक कर रहा है तथा धूर्त पापी प्रशासन इन्हें आश्रय दे रहा है, प्रोत्साहन दे रहा है। लाखों टन अंगूरों तथा गुड़ को सड़ा कर शराब का उत्पादन किया जा रहा है। जौ आदि अन्न को

सड़ाकर बीयर आदि बनाकर लोगों को पाप-पंक में धकेला जा रहा है। लाखों हेक्टेयर भूमि बंजर पड़ी है, फिर कौन बुद्धिमान् कह सकता है कि परमात्मा ने अन्न, फल व दूध की कमी रखी, जिस कारण मांस मछली खाने को विवश होना पड़ता है। मेरा स्पष्ट मत है कि जहाँ भी मांस के स्रोत पशु पक्षी, मछली आदि होते हैं, वहाँ वनस्पति भी अवश्य उत्पन्न होती है, जहाँ अन्न, शाक नहीं होता, वहाँ पुरुषार्थ से अन्न उत्पन्न किया जा सकता है। जब चन्द्रमा पर कृषि करने की कल्पना मानव कर रहा है, तब इस भूमण्डल पर कैसे सम्भव नहीं? आवश्यकता प्रबल इच्छाशक्ति एवं कठिन पुरुषार्थ की है, फिर भी जहाँ कृषि न हो सके, वहां रहना ही क्यों? कोई आसमान में बैठकर कहे कि यहाँ दूध, अन्न, फल होता नहीं, तब मैं तो कौवे, चिड़िया, चील व गिद्ध खाऊँगा, तो खाये उसकी इच्छा। कर्महीन को कौन समझावे कि नीचे उतर कर धरती का अमृत गोदुग्ध, फल, अन्न, मेवा खा ले। कोई एवरेस्ट चोटी पर बैठकर पेट भरने का उपाय पूछे, तो दो पत्थर के टुकड़े खा या बर्फ खा ले। जिस एस्किमो की बात कर रहे हैं, वहाँ के मांसाहारी रेण्डियर जानवर का दूध भी पीते हैं। वह रेण्डियर तो मछली खाता नहीं होगा। तब जो वनस्पति वह खाता है, उसका बीज भी पैदा होता होगा, तब उससे मनुष्य क्यों नहीं काम चला सकता? जब दूध है, वनस्पति के बीज व वनस्पति है, फिर भी मछली खाना मतिभ्रष्टता नहीं, तो क्या है? यदि इससे तृप्ति की पूर्ण उपलब्धता न हो, तो वैज्ञानिक प्रयत्न हों, तब भी असफलता मिले, तब वहां से अन्यत्र जाना चाहिये। यह तो आपके मांस आधारित अर्थशास्त्र की परीक्षा हुई, **अब आप लिखते हैं–**

'पशुओं को काटने या उनके शिकार करने की जो मनाई कर दी जाय, तो बेकार और फालतू पशु समस्या बन जायेंगे।'

समीक्षा– सर्वप्रथम मैं पूछना चाहता हूँ कि आप यही क्यों चाहते हैं कि धरती पर मनुष्य ही रहे और किसी प्राणी को जीने का अधिकार ही नहीं है। क्या वे ईश्वर की सन्तान नहीं हैं? क्या आपका खुदा उनके लिये रहीम नहीं है? दूसरी बात मैं यह पूछना चाहता हूँ कि कुत्ता, कौआ, सांप, शेर, चीता, गीदड़ को प्रायः लोग नहीं खाते,

अनेक कीट पतंगों को मनुष्य नहीं खाता। बिच्छू, छिपकली, बर्र, ततैया को नहीं खाता, तब इनकी संख्या क्यों नहीं बढ़ रही? हाँ, कहीं पर कुछ मांसाहारी ऐसे भी हैं, जो इन कुत्ते, कौए, चूहे आदि सबको चट कर जाते हैं। फिर सूअरों को हराम बता दिया, तब इन्हें कहां रखा जाये, यह भी सुझाव दीजिए। स्मरण रहे कि मनुष्य इन सबका ठेकेदार नहीं है। परमात्मा स्वयं सम्पूर्ण सन्तुलन रखता है।

तीसरी बात मैं यह पूछना चाहता हूँ कि आज सर्वाधिक संख्या तो मनुष्यों की बढ़ रही है। संसार भर के बुद्धिजीवी इसके प्रति सचेत नजर आते हैं। संसार में कृत्रिम परिवार नियोजन वा भ्रूणहत्या जैसे कुकर्म किये जा रहे हैं। चार-चार विवाह वालों की संख्या वृद्धि का तो कहना ही क्या? तब क्या इनको खाना भी प्रारम्भ करेंगे? कहें महाशय कैसा रहेगा? सबकी चिन्ता मिट जाये और यह मांस अन्य मांसों से श्रेष्ठ भी होगा। गन्दगी खाने वाले मुर्गे-मुर्गी वा घास-पात खाने वाले गाय-भैस, भेड़-बकरी, ऊँट की अपेक्षा दूध, अन्न, मेवा, फल आदि खाने वाले मनुष्य का ही मांस क्यों ना खाया जाये? महाशय! जरा सोचिये कि खुदा ने ऐसी आज्ञा क्यों नहीं दी? क्या सबसे अधिक रहमत के पात्र मनुष्य, सूअर और मांसाहारी प्राणी ही रहे। तब सुअर, मनुष्य, कुत्ते व बिल्ली ही खुदा के बन्दे होने से भाई-भाई ठहरे। क्या आपको यह स्वीकार है? यदि हाँ, तो आपको तो चाहिए कि गाय, भैंस, बकरी आदि का दूध पीना त्यागकर अपने भाई बन्दों सूअरी, कुत्ती, गीदड़ी का दूध, दही, घृत का पान करके आनन्द मनावें। क्योंकि आपका खुदा इन्हीं जानवरों पर विशेष मेहरबान है। आपने भूड़ के मांस को हराम कहा है? मैं नहीं समझ पाया कि भूड़ किसका नाम है? कुरान के अध्ययन के आधार पर और आपके विवरण के आधार पर भूड़ का अर्थ सूअर प्रतीत हो रहा है। यदि और कोई अर्थ हो, तो कृपया अवगत करावें। **आपका कहना है-**

'वास्तव में भूड़ इस्लाम में नैतिक दृष्टि से हराम माना है। अन्न का भी मनुष्य के स्वभाव पर प्रभाव पड़ता है। भूड़ का मांस अपने भीतर निर्लज्जता पैदा करता है, उसे खाने से मनुष्य का

स्वभाव अत्यन्त निकृष्ट हो जाता है! भूड़ एक निर्लज्ज पशु है। मादा भूड़ के चारों ओर नर भूड़ इकट्ठे होकर एक के बाद एक उसके साथ सम्भोग करते हैं। यह निर्लज्जता की पराकाष्ठा है। जो किंचित् (क्वचित्) ही अन्य पशु में देखने को मिले।'

समीक्षा– आश्चर्य है कि क्रूरतापूर्वक पशु मारने वाले भी नैतिकता की बात करते हैं। सूअर को निर्लज्ज पशु बताया। मैं पूछता हूँ कि मुर्गी, गाय, बकरी, भैंस, भेड़ क्या बुर्का अथवा साड़ी पहनती हैं, जिससे उन्हें लज्जावती कहा जाये एवं बकरा, बैल, भैंसा, मुर्गा क्या पाजामा, टोपी, शेरवानी, धोती या पेंट पहनकर शालीन लगते हैं? जो एक साथ एक मादा से अनेक नरों के सहवास की बात है, वह तो उन सभी पशुओं में देखी जा सकती है, जो झुण्ड में स्वतन्त्र विचरण करते हों तथा जिनका ऋतुकाल लम्बा होता हो। फिर जरा मनुष्य में ही देख लीजिए, जिनमें कुछ लोग एक साथ अनेक स्त्रियों से सम्पर्क करते हैं। जब एक मादा से अनेक नरों का सम्पर्क निर्लज्जता है, तब एक नर का अनेक मादाओं से सम्पर्क कैसे सज्जनता और शालीनता हो गया? फिर मजहबी दंगों अथवा कई बार सामान्य परिस्थिति में भी यह कामी मनुष्य महिलाओं से सामूहिक बलात्कार करते हैं और ऐसा करके मार भी डालते हैं, तब इस इन्सान की तुलना किससे की जाय, जरा विचारें। मैं आपके इस तर्क के उत्तर में यह भी कहना चाहूंगा कि जब अन्न (भोजन) का प्रभाव स्वीकारते हैं। **तब आपको गन्दा खाने वाले मुर्गी, मुर्गा तथा तृणादि खाने वाले तथा नग्न निर्लज्ज पशुओं को छोड़ कर लज्जावान् बुद्धिजीवी का मांस खाना चाहिए।** तब पता चलगा कि आपका तर्क कितना बेहूदा व अनावश्यक है। पशु पक्षी तो खुला सहवास करते हैं, तब उनका मांस खाने से लज्जावान कैसे रहा जा सकता है? फिर कौये का मांस क्यों नहीं खाते, जिसे सहवास करते शायद ही किसी ने देखा हो। महाशय! अनुचित तर्कों से स्वपक्षपोषण करना असफल ही रहता है। यदि पौष्टिकता के लोभ से मांस खाते हैं। तो सूअर का मांस ही सर्वाधिक पौष्टिक है, जिसमें 49 प्रतिशत वसा की मात्रा है, जो किसी भी अन्य मांस में नहीं होता। आप जो गाय, भैंस, बकरी, भेड़, मुर्गा का मांस खाते

हैं, वह सूअर के मांस से जहाँ पौष्टिकता की दृष्टि से हीन होता है, वहीं इनमें हानिकारक पदार्थ यूरिक एसिड की मात्रा भी सूअर के मांस की अपेक्षा अधिक होती है। यह मात्रा गोमांस में जहाँ 14.45 प्रतिशत है, वहां सूअर के मांस में केवल 8.48 प्रतिशत है, सूअर का मांस जहाँ 5.25 घन्टे में पचता है, वहीं गोमांस 5. 50 घन्टे में पचता है। तब गोमांस से सूअर मांस हर दृष्टि से श्रेष्ठ है। फिर मांसाहार के विज्ञानी आप क्यों सूअर के मांस को हराम मानते हो? क्या इसलिए क्योंकि यह कुरान में लिखा है? तब तो सब कैसे मानें? बात वह कहनी, जो सबके हित में हो, न कि किसी मजहब विशेष के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त हो। फिर मैं यह भी कहूँगा कि कुरान के आदेशों को मानता ही कौन है। देखिए हजरत मुहम्मद साहब क्या कहते हैं–

'उसने तुम पर मरा हुआ जानवर लहू और सूअर का गोश्त हराम कर दिया है।' सूरः बकर, पार, स यकूल, आयत 173 देखिए।

महाशय! है कोई खुदा का बन्दा वा रसूल का भक्त ? जो जीवित जानवर को कुत्ते बिल्ली की भाँति खा जाये अथवा सांप, मगरमच्छ या छिपकली की भाँति जीवित निगल जाये ? कोई यह कहे कि स्वयं मार कर खाना चाहिए, मरा हुआ नहीं, तब प्रथम तो मैं कहूँगा कि कुरान में ऐसा कहाँ लिखा है? केवल इतना लिखा है कि मरा हुआ जानवर हराम है। तब स्वयं मारने की बात कैसे सिद्ध हुई? यदि इसे भी मानें, तो भारत या विश्व के समस्त बूचड़खाने तत्काल बन्द होने चाहिए क्योंकि इनका मांस खाने वाले कुरान की आज्ञा भंग करने से काफिर सिद्ध हुये और काफिर का दण्ड है, मृत्यु। तब सर्वप्रथम खरीदकर मांस खाने वालों को सर्वप्रथम मृत्यु दण्ड देना चाहिये, फिर कसाइयों को, जो लोगों को काफिर बनाने में सहायक हैं। जिसे मांस खाना हो और अपने को इस्लामी कहता हो, तो मुर्गे, मुर्गी पकड़कर नोंच-नोंच कर खा ले। यदि ऐसा न करे, तो भी स्वयं ही मारे। **यह विधान मेरा या वैदिक धर्म का कदापि नहीं है,** बल्कि आपके विधान को ही आपको समझाना पड़ रहा है। आपने अपने लेख में लहू को मनुष्य का प्रथम भोजन

बताया है, जबकि आपके रसूल वा खुदा ने लहू को हराम बताया है। अब आप स्वयं, आपके खुदा वा रसूल मिलकर निर्णय करें कि क्या लहू मनुष्य का भोजन है?

मांस मनुष्य का भोजन नहीं

आपने लिखा है–

'अण्डे और मांस भी एक सज्जन मनुष्य का भोजन हो सकता है। उनको खबर नहीं है कि मनुष्य का सबसे पहला भोजन मांस और लहू ही था। मां के गर्भ में मांस और रक्त द्वारा ही उसका पालन होता है।'

समीक्षा– यहाँ आप विज्ञान का सहारा लेकर भी अज्ञान में बह गये हैं पुनरपि प्रबुद्धजनों को भी छलने का असफल प्रयास कर रहे हैं। मां के गर्भ में मां के रक्त द्वारा बच्चे को सभी आवश्यक तत्व मिलना तो ठीक है परन्तु मांस का उपयोग होना नितान्त असत्य व भ्रामक है। मां जो भोजन करती है, वह रस रूप में उसके रक्त द्वारा भ्रूण के पालन में सहयोगी बनता है। मैं पूछता हूँ तब तो अपनी मां का रक्त पीना मांस भी खा जाना सबसे प्राकृतिक, आप मानेंगे? संसार में है कोई मांसाहार का समर्थक विशेषकर आपके जैसे भ्रामक कुतर्क प्रस्तुत करने वाला, जो अपनी मां को मारकर खा सके। फिर मैं पूछता हूँ कि उस समय तो मां का रक्त बच्चे के नाल द्वारा बच्चे को प्राप्त होता है न कि मुख के द्वारा। उस समय बच्चा मां के अंग के भाँति ही काम करता है। जैसे हमारे शरीर का भोजन, यकृत, आमाशय, गृहणी व आँतों द्वारा तैयार रस रक्त में मिलकर हमारे सभी शरीरांगों का पोषण करता है, उसी प्रकार मां के शरीरांगों के समान भ्रूण का पोषण भी उसी प्रकार होता है। यह प्रक्रिया न केवल मनुष्य में बल्कि सभी प्राणियों में होती है। तब क्या हाथी, गाय, घोड़ा, बकरी, भैंस, खरगोश सभी को मांस खाना सिखाओगे? उनका भी प्राथमिक भोजन आपकी दृष्टि में मां का रक्त व मांस रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि आप

शरीर क्रियाविज्ञान से अनभिज्ञ लोगों को भ्रमित करना चाहते हैं। मैं आपसे पूछता हूँ कि यदि आप अब भी इसी कुतर्क का हठ करें, तो क्या आप ऐसा करेंगे-

1. नाभि द्वारा अपनी मां व अन्य प्राणियों का रक्त पीवें।
2. वैसे आपके इस तर्क से अण्डा, मांस तो अप्राकृतिक सिद्ध होगा, तब क्या इसे छोड़ेंगे?
3. गर्भ में तो मल-मूत्रादि त्याग भी मां के अंगों द्वारा ही भ्रूण करता है, अपने अंगों से नहीं, तब क्या अब भी ऐसा करेंगे? यदि आप ऐसा नहीं कर पाते हैं तब, आपका तर्क बालू की दीवारों से बना महल सिद्ध हुआ या नहीं?

आपका यह कथन सत्य है कि भारत में दूध की कमी का कारण नस्ल का खराब होना है, जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए। परन्तु जो पशु दूध देना बन्द कर दें, उन्हें मारकर खा जाना नितान्त अनैतिक, अप्राकृतिक दुष्ट कर्म है। क्या बीमार तथा बूढ़े माता-पिता को मारकर खा जाने की अनुमति कोई अर्थशास्त्री दे सकता है? यदि कोई ऐसा कहता भी है, तो वह बड़ा धूर्त और पापी ही होगा और उसको भी बच्चों द्वारा मारकर खा जाने का कुफल भोगना होगा। आप बतायें कि क्या आपका धर्मग्रन्थ वा किसी का भी धर्मग्रन्थ ऐसी आज्ञा देता है और जो धर्म नहीं माने, वे क्या स्वयं ऐसे ही मरना चाहेंगे?

जिस गाय, बकरी, भैंस का मीठा पौष्टिक दूध पीते रहे, उसे दूध बन्द होते ही काट मार कर खा गये। जिस बकरे को खूब खिला पिला कर मोटा किया, बच्चे की भाँति प्यार से रखा, उसे ईद के दिन माला पहनाकर मार काट कर खा गये, अहा! कितनी कृतघ्नता है?

मांसाहार की अवैज्ञानिकता

आप मांसाहार की वैज्ञानिकता पर लिखते हैं–

‘मनुष्य और पशुओं में यह क्षमता नहीं कि वह वनस्पति की तरह एकदम सादगी भरे तत्वों द्वारा अपने मिश्रित पदार्थ बना सके। भोजन में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, खनिज, विटामिन आदि चाहिए मगर फिर भी मनुष्य को जो प्राणी प्रोटीन की आवश्यकता है, उसकी पूर्ति वनस्पति प्रोटीन से प्राप्त प्रोटीन से नहीं की जा सकती। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सन्तुलित वातावरण में मानव के खुराक में मांस का उचित मात्रा में होना आवश्यक है।’

दया के प्रश्न पर आपका लिखना है–

‘पशुओं से अधिक वनस्पति दया के पात्र हैं, जैसे कि वनस्पति चलने फिरने में भी विवश हैं। उन्हें भी सुख दुःख का अनुभव होता है। तब दया न्याय के इस दृष्टिकोण को मान लेने के बाद मनुष्य का अधिकार संसार की कोई भी चीज पर नहीं रहता। मांसाहार के विरोध से वनस्पति लोक पर भी हमारा कोई अधिकार नहीं रहता।’

समीक्षा– आपका यह कथन है कि मनुष्य एवं पशु आदि वनस्पति की भाँति भूमि से सीधे तत्व ग्रहण नहीं कर सकते, केवल लेख का कलेवर बढ़ाने वाला है क्योंकि कौन शाकाहारी कहता है कि हमें मिट्टी, पानी, हवा से वनस्पतियों की भाँति सीधे आहार ग्रहण करना चाहिये। फिर आपने केवल पाठकों को अपनी वैज्ञानिकता का प्रदर्शन करने हेतु ही लिखा है, जिससे अल्पमति लोग आपसे आकर्षित हो सकें। यह अनावश्यक व अप्रासंगिक है। अन्य बहुत सी बातें जैसे चमड़े की उपयोगिता, रेशम उद्योग, मांसाहारी पौधे आदि के बारे में व्यर्थ लिखा गया है। जहाँ तक प्रोटीन प्राप्ति की बातें हैं, तो मैं पूर्व में ही इस बात को स्पष्ट कर चुका हूँ कि मांस प्रोटीन प्राप्ति हेतु उससे कई गुनी वानस्पतिक प्रोटीन खोनी पड़ती है। तब ऐसी मूर्खता क्यों करनी? आपका यह लिखना है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मानव खुराक में मांस प्रोटीन आवश्यक है, तो मैं पूछना चाहूँगा

कि संसार में कब और किस वैज्ञानिक ने शोध कर यह निष्कर्ष निकाला है कि वनस्पति के स्थान पर मांस प्रोटीन उत्तम है। यदि जैव प्रोटीन की बात करें, तो क्या दूध, दही, छाछ को जैव प्रोटीन के रूप में नहीं ले सकते? **दूध प्राकृतिक एवं प्रथम आहार होने से मानव हेतु सर्वोत्तम खाद्य है।** अंकुरित दलहन, अन्न आदि का प्रोटीन क्या मांस प्रोटीन से कम गुणकारी है? **सुप्रसिद्ध आयुर्वैज्ञानिक सैमसन राइट ने लिखा है कि प्रोटीन का उक्त विभाजन अर्थात् मांस प्रोटीन की श्रेष्ठता और वनस्पति प्रोटीन की निम्नता, अवैज्ञानिक एवं अव्यवहारिक है।** उन्होंने तर्क दिया है कि पशुओं की मांसपेशियां घास खाने से ही बनती हैं अर्थात् उच्च स्तर का प्रोटीन घास के खाने से ही बनता है। फिर मानव के लिए वानस्पतिक प्रोटीन निकृष्ट कैसे हो गया? प्रोटीन की गुणवत्ता उसमें स्थित एमीनो एसिड, उसके अवशोषण एवं सात्मीयकरण पर निर्भर करती है। जितना जल्दी जो प्रोटीन पचता और शरीर के काम आता है, वह उतनी ही ऊँची गुणवत्ता का प्रोटीन होता है। दूध, दही, सोयाबीन का दूध, दही, मूंगफली, गिरियों का प्रोटीन मांस प्रोटीन से अधिक शीघ्र पचता एवं अवशोषित होता है। पके मांस में विटामिन बी-1 व बी-2 होते ही नहीं, जबकि अंकुरितान्न में बी-12, बी-1, बी-2, बी-3, एवं अनेकों एंजाइम्स पर्याप्त मात्रा में होते हैं। परन्तु यदि रसना मांस का ही स्वाद चाहे अथवा साम्प्रदायिक मिथ्या धारणा मांसाहार की क्रूरतापूर्ण भावनायें पैदा करे, तब क्या किया जाये? महाशय! यदि स्वाद ही लेना, हो तो जरा कच्चा मांस या जीवित जानवरों को कुत्ते, भेड़िये के समान चबा चबा कर खाकर देखिये। मेरा मानना है कि हर मानव मांसाहार से स्वाभाविक घृणा करता है, इस कारण उसे तल, भूनकर मसाले तेल से स्वादिष्ट बनाकर खाता है और मांस विक्रेता उसे ढककर रखता है, जबकि फल, दूध, मेवे, सलाद, फूल, अन्न से कोई घृणा नहीं करता। इनको कच्चा भी खाया जा सकता है। अनाजों का अंकुरण श्रेष्ठ किस्म का पूर्ण भोजन होता है। अन्न शाक आदि को तलकर, भूनकर खाते अवश्य हैं परन्तु उन्हें कच्चा भी खा सकते हैं और प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान इससे अनेक असाध्य रोग भी ठीक करता है। क्या संसार में है कोई डाक्टर, जो मांस को कच्चा खिलाकर किसी रोग

को ठीक कर सकता हो? आप भोजन की पौष्टिकता की बात करें, तो सस्ते मूंग, मूंगफली, चने, उड़द में इतना प्रोटीन होता है, जितना किसी मूल्यवान मांस में नहीं होगा। मांस प्रोटीन के साथ आपको यूरिक अम्ल आदि हानिकारक पदार्थ भी खाने पड़ते हैं, जो अनेक रोग उत्पन्न करते हैं। जबकि अन्न, फल, दूध, मक्खन आदि में ये विष होते ही नहीं। मांसाहार से प्राप्त इन विषों को मूत्र संस्थान भी बाहर नहीं निकाल पाता, जिससे चर्म रोग, पाचन शक्ति की निर्बलता, कब्ज आदि रोग पैदा होते हैं। अब स्वास्थ्य एवं मांसाहार सम्बन्धी आपके तर्कों की परीक्षार्थ कुछ वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत हैं–

1. हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के डा. ए. वाचमैन, डा. डी. एस. वर्न्सटीन के वर्षों तक किये गये शोध का परिणाम– मांसाहारियों का मूत्र प्रायः अम्लीय होता है, क्योंकि मांस से अम्लता उत्पन्न होती है, फलतः शरीर के पी. एच. को उदासीन रखने के लिये हड्डियों के क्षारीय लवण घुलने लगते हैं और हड्डियां कमजोर हो जाती हैं।
2. मांसाहार से हृदयरोग, उच्च्च रक्तचाप, थ्रोम्बोसिस, लकवा, गुर्दे व पित्ताशय की पथरी, यकृत रोग आदि होते हैं।
3. जार्जिया स्कूल ऑफ मेडिसिन विश्वविद्यालय के वी.पी. सिडेन स्ट्रीकर, ए.पी. ब्रिग्स तथा एन.एम.डे बाउग्र के अनुसार अण्डे से अवसाद, हृदय पर दबाव, चेतनशून्यता, सनसनाहट, मितली, भारीपन, थकान, त्रास, हीमोग्लोबिन की कमी आदि रोग होते हैं। विसकॉन्सिन के तीन शोधकर्ताओं के अनुसार अण्डे से यकृत् कैंसर की सम्भावना अधिक रहती है, कृषि विभाग फ्लोरिडा द्वारा १८ माह के शोध के अनुसार अण्डों में ३० प्रतिशत डी.डी.टी. विष होता है।
4. अण्डे में कार्बोहाइड्रेट व कैल्शियम बहुत कम होने से पेट में सड़ान्ध उत्पन्न होती है।

5. जर्मन कैंसर रिसर्च सेन्टर हिडलवर्ग के डा. रैनर फ्रैंट्जेल बेडम एवं उनके साथियों के अनुसार मांसाहारियों में आमाशय यकृत् का कैंसर, मोटापा, कॉलेस्ट्रॉल वृद्धि की आशंका अधिक रहती है।
6. मांसाहार में रफेज नहीं होने से अतिसार, बवासीर, हर्निया, ऐपेण्डीसाइटिस, गर्भाशय डिम्बग्रन्थि, आमाशय, आन्त्र कैंसर होने की आशंका अधिक रहती है।
7. जापान के राष्ट्रिय संस्थान के निदेशक ताकेशी हीरायामा के अनुसार कैंसर का खतरा मांसाहार से बहुत बढ़ जाता है।
8. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार मांसाहार से 160 प्रकार की बीमारियां फैलती हैं। नोबल पुरस्कार विजेता अमरीकन आयुर्विज्ञानी डा. ब्राउन तथा गोल्डस्टीन के अनुसार मांसाहार से दिल के दौरे की आशंका बढ़ जाती है।
9. विश्व प्रसिद्ध जर्मन प्राकृतिक चिकित्सक लुई कूने के अनुसार मांस अप्राकृतिक व रोगकारक आहार है ।
10. मांसाहार की वृद्धि के साथ-2 नासूर में दर्द में असाधारण वृद्धि होती है - डा. विलियम रोर्बट, डा. सरजेम्ससीयर।
11. मांसाहार से दंत रोग पायरिया के रोगी बढ़ते हैं- मि. आर्थर अण्डरवुड, डा. मि. थोमस जे रोगन।
12. मांस से कैंसर बढ़ता है - डा. रसेल।
13. यह सम्भव है कि कुछ व्यक्ति बिना किसी प्रकार की क्षति के मांस सेवन कर रहे हैं, पर यह निश्चय है कि इस प्रकार के अमानुषिक भोजन का परिणाम जल्दी वा देर से अवश्य प्रकट होगा। लीवर और किडनी दूषित होकर अपना काम छोड़ देंगे और उसके फलस्वरूप क्षय, कैंसर और गठिया आदि रोग हो जायेंगे। मेरी एस. ब्राउन (रीजन फॉर एवं वेजीटेरीयन डाइट)।
14. मैंने मांस सेवन की मात्रा बहुत कम कर दी, जिसका परिणाम यह हुआ कि सिरदर्द, मानसिक थकावट तथा गठिया रोग, जिससे मैं अनेक वर्षों तक पीड़ित था, दूर हो गये - डा. पार्कस।

15. अमरीका की जनरल एकाउण्टिंग की रिपोर्ट के अनुसार मांस में 143 रसायन पाये गये, जिनमें 47 कैंसर कारक थे।

16. अमरीका की एक प्रतिष्ठित रिसर्च संस्था वर्ल्ड वाच के अनुसार मांस खाने वालों में दिल के दौरे, मधुमेह, आंत्र कैंसर और दूसरी घातक बीमारियाँ अधिक होती है।

मांसाहार एवं पर्यावरण तंत्र

शाकाहार के क्षेत्र में विश्वभर में अग्रणी भूमिका निभाने वाले प्रसिद्ध **भारतीय भौतिक वैज्ञानिक प्रो. मदनमोहन बजाज** एवं उनके साथी वैज्ञानिकों ने अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं। उन्होंने अपनी महत्वपूर्ण शोध में यह सिद्ध किया है कि **मांस व मछली खाने से न केवल अनेक प्रकार के रोग फैल रहे हैं अपितु इस पृथिवी पर भयंकर तूफान, चक्रवात आदि उत्पात भी बढ़ते हैं।** उन्होंने आइंस्टीन पेन वेव की चर्चा की है तथा हिंसा से उत्पन्न तरंगों के द्वारा न केवल इन उत्पातों व रोगों अपितु इनसे हिंसक मनुष्य के जीन्स से लेकर सम्पूर्ण ग्रह, सौरमण्डल व गैलेक्सी एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के प्रभावित होने की व्याख्या की है। उन्होंने इसे Biso Cosmology कहा है। उन्होंने इन तरंगों पर आधारित BIS Energy, BIS Field, Bisobiochemistry, Bisochemistry, Bisodynamics, Bisogenetics, Bisogeometry, Bisogynacology, Bisohematology, Bisomathematics, Bisoneurology, Bisooceanography, Bisooncology, Bisopathology, Bisophysics, Bisorheology, Bisostatics, BIS String theory, Bisotopology आदि अनेक विज्ञानों का विकास किया है तथा **मांसाहार, मछली, मदिरा, अण्डे आदि के भक्षण को सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के लिए हानिकारक सिद्ध किया है।** फारुख जी! कहाँ सो रहे हैं, आप? कहें फारुख खां जी, क्या और वैज्ञानिक प्रमाण चाहिये? आपको स्मरण होगा कि कुछ दिन पूर्व मैड

काउ नामक बीमारी यूरोप में फैली, जिससे गोभक्षक पापी मरे। यह बीमारी उन गायों का मांस खाने से फैली, जिन्हें यह रोग था। गायों में यह रोग उन्हें मांसोत्पादनार्थ मोटा करने के लिये मांस खिलाने से फैला और गायें मरने लगीं। जब उनसे यह रोग मनुष्य में फैला, तो निर्दोष लाखों गायों को नर पिशाचों ने जीवित जला दिया। शाकाहारी गाय को मांस खिलाने से यह समस्या उत्पन्न हुई। तब क्या शाकाहारी मनुष्य को अप्राकृतिक आहार मांस खिलाने से रोग नहीं फैलेंगे? वर्ष 1997 सन् में हांगकांग में मुर्गी के मांस व अण्डों को खाने से बर्ड फ्लू नामक बीमारी फैली थी, जिसके कारण 12 लाख मुर्गियों को जलाकर मार डाला गया। उसके बाद भी कई देशों में मुर्गियों से बर्ड फ्लू की बीमारी ने मांसाहारियों को सबक सिखाया, तब मांसाहार की वकालत करने वालों पर दया ही आती है। क्या कभी सुना कि दूध, फल, शाक, रोटी से ऐसा संक्रमण रोग फैला, जिसके कारण दूध, फल, शाक, रोटी खाना बन्द कर दिया हो? मैं फारुखजी से पूछता हूं कि जो लोग स्वयं को गर्वपूर्वक मांसाहारी कहते हैं, क्या वे शाकाहार को छोड़ सकते हैं? क्या वे रोटी, चावल, दाल, शाक को पूर्णतः त्याग सकते हैं? संसार में कौन मांसाहारी है, जो जीवन भर मांस अण्डा पर रहकर जीता हुआ स्वस्थ रह सकता है? जबकि सभी शाकाहारी बिना मांस अण्डे के जीवन जीते हैं। अनेक मांसभोजी भी शुद्ध शाकाहारी सात्विक भोजन करके बिना दवा के स्वस्थ होते हैं। क्या संसार का कोई डाक्टर केवल मांसाहार से किसी रोग की चिकित्सा करने का दावा कर सकता है? जब सम्पूर्ण वैज्ञानिक जगत् में शाकाहार की क्रान्ति आ रही है। अपने पेट को कब्रिस्तान बनाने वाले बड़े-2 मांसाहारी लोग वा देश मांस व अण्डों को त्याग रहे हैं, वहां आप कुरान की रूढ़ियों में जकड़े इस मांसाहार में ही वैज्ञानिकता ढूंढ़ने का असफल प्रयास कर रहे हैं। **आपका कथन है–**

'वनस्पति में भी जीव होता है तथा वह चल फिर भी नहीं सकता, इस कारण वह सबसे अधिक दया का पात्र है, (यदि दया का प्रश्न शाकाहारी उठाये तो)।'

समीक्षा– प्रथम तो मैं यह कहूंगा कि यदि चल फिर सकने वालों को ही आप खाना चाहते हैं, तो मैं कहूंगा कि बेचारे मूक-बधिर-अज्ञानियों को खाने के स्थान पर बुद्धिमान्, धर्मात्मा व वैज्ञानिक मिलें, तो क्या कहना? कहो जी-उचित रहेगा न? हमारी दृष्टि में जो जितना अधिक कल्याणकारी एवं विकसित प्राणी होता है, उसको मारने में उतना ही अधिक पाप होता है। वृक्षों में जीवात्मा है या नहीं, यह अभी विवादास्पद है। दोनों पक्ष अपने-2 तर्क प्रस्तुत करते हैं। पुनरपि जीवात्मा के होने के पक्ष में पुष्ट प्रमाण हैं। वृक्षों में जीवात्मा यदि है, तब भी वह महासुषुप्ति अवस्था में होता है, इस कारण सुख दुःख का अनुभव नहीं होता। वैज्ञानिक वसु के प्रयोगों का फल यही कहा जा सकता है कि उन्हें काटने आदि से उन पर एक क्रिया विशेष होती है, न कि हमारी भांति सुख दुःख का स्पष्ट अनुभव। कोई कहे कि सोते हुये सुषुप्ति अवस्था को प्राप्त मनुष्य को अथवा मूर्छित किये मनुष्य को मार डालना क्या पाप नहीं है? उसे भी दुःख का अनुभव एकाएक नहीं होगा, इसका उत्तर यह है कि मनुष्य की इस प्रकार की सुषुप्ति वा मूर्छा उसे सुई चुभोते ही टूट जायेगी, यदि नहीं भी टूटे, तो गम्भीर चोट मारने पर टूट जायेगी और वह उस प्रकार की अवस्था में न सदा से था और न सदा रहेगा, इस कारण उसकी सुषुप्ति की तुलना वृक्षों की महासुषुप्ति से नहीं हो सकती। वृक्षों की यह अवस्था स्वाभाविक तथा स्थायी होती है। दूसरी ओर यह विचारें कि हमारी शरीर रचना परमात्मा ने शाकाहार के लिये ही बनाई है। बड़े-2 वैज्ञानिक इस बात को स्वीकारते हैं। आपका इस विषय में एक प्रभावी तर्क है परन्तु गम्भीरता से विचारने पर वह भी भ्रामक सिद्ध हो जाता है।

मांसाहारी व शाकाहारी में भेद

आपका कथन है–

‘कुछ लोग कहते हैं कि मांसाहारियों को ईश्वर ने दाँत और पंजे दिये हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि वे शिकारी हैं, मगर

मनुष्य को नहीं। इस प्रकार की बात करने वाला यह नहीं सोचता है कि ईश्वर ने जो मनुष्य को चीरने और पकड़ने के लिये दाँत और पंजे नहीं दिये मगर उसको बुद्धि दी, जिसके द्वारा वह अपने उपयोग के लिये अच्छे से अच्छा हथियार बना सकता है। ईश्वर ने पशुओं को ठंडी से बचने के लिये चौड़ी मोटी चमड़ी और बड़ी चमड़ी दी है, तब मनुष्य को उसने बुद्धि दी है, जिससे काम लेकर वह अपने लिये अच्छी से अच्छी शाल और कम्बल तैयार कर सकता है। पशुओं के शरीर पर ऊन व बाल देखकर कोई मनुष्य यह परिणाम खोजने लगे कि मनुष्य को ऊनी वस्त्रों का उपयोग नहीं करना चाहिये। स्पष्ट है कि इस प्रकार का विचार बड़ा हास्यास्पद है।'

समीक्षा– आपका यह तर्क निश्चित ही सुन्दर व प्रभावी है परन्तु आप यह न सोचें कि शाकाहारियों के पास केवल यही एक रामबाण है। हमारे पास अन्य अनेकों अस्त्र शस्त्र तर्क हैं, जिससे बचना (उत्तर देना) मांसाहारियों के वश की बात नहीं।

1. सर्वप्रथम तो प्राक्वर्णित तर्कों, वैज्ञानिक व आर्थिक तथ्यों का कोई उत्तर आपके पास नहीं है।
2. चलिये, पंजों का काम हथियार ने कर लिया परन्तु जो दन्त रचना मांसाहारियों व शाकाहारियों की भिन्न है, उसका क्या करेंगे?

दाँत तीन श्रेणियों के होते हैं– काटने वाले, पकड़ने या फाड़ने वाले और पीसने वाले वा चबाने वाले। मांसाहारियों में पकड़ने वाले दाँत अति नुकीले व तीक्ष्ण होते हैं, वे हमारे पास नहीं हैं। मांसाहारियों का जबड़ा अगल-बगल नहीं हटता, जिससे वे अपना आहार पीस नहीं सकते बल्कि चबा ही सकते हैं, जबकि हमारे दाढ़ पीसने का काम करते हैं।

3. मांसाहारी जानवरों का अमाशय लगभग गोल और आंतें मुंह से पुच्छमूल तक की लम्बाई से तीन से पाँच गुनी तक होती है, जबकि हमारी आंतें पूरे शरीर से दस से बारह

गुनी होती है और सिर से रीढ़ की अन्तिम केशरुका से लगभग 24 गुनी। उधर घास खाने वाले पशुओं में लगभग 20 से 28 गुनी तक होती है। आप विचारें कि हमारी आंतें मांसाहारी की अपेक्षा शाकाहारी पशुओं से ही समानता रखती हैं। अब आपकी मांसाहार से निर्मित बुद्धि आंतों को तो छोटी नहीं कर पायेगी? आमाशय को तो गोल नहीं किया जा सकेगा।

4. जिस बच्चे ने पशुवध के विषय में कुछ भी नहीं सुना है, वह यदि मांस खाता भी हो, तो भी किसी मोटे ताजे बकरे अथवा बैल को देखकर लालायित नहीं होगा, जबकि मांसाहारी प्राणी लालायित ही होगा।
5. शाकाहारियों में पाचन मुँह से प्रारम्भ होता है, जबकि मांसाहारियों का पाचन आमाशय से प्रारम्भ होता है।
6. शाकाहारियों की लार में क्षारीय एंजाइम टाइलिन सेलाइवा एमाइलेस होता है, जो स्टार्च को पचाता है, जबकि मांसाहारियों की लार अम्लीय होती है।
7. मांसाहारी जानवर मांस के साथ हड्डी भी खाते हैं परन्तु मानव हड्डी नहीं खा सकता।
8. शाकाहारियों के नवजात शिशु को मांसाहार पर जीवित व स्वस्थ नहीं रखा जा सकता। मांसाहारी पशुओं एवं महिलाओं में दूध भी कम उतरता है।
9. मांसाहारी रात्रि में भी स्पष्ट देखते हैं। उनकी आंखें चमकीली व गोल होती है, जबकि शाकाहारी की आंखें ऐसी नहीं होती।
10. शाकाहारी प्रायः ओठ लगाकर पानी पीते हैं, जबकि मांसाहारी जीभ से पानी पीते हैं।
11. फूल, पत्ती, फल, गुलदस्तों से घरों को सजाकर ही मानव का चित्त प्रसन्न रहता है, जबकि घोर मांसाहारी भी अपने घर द्वार, फर्नीचर को मांस, चमड़ा, खून, हड्डी आदि से सजाना नहीं चाहेगा। इससे सिद्ध होता है कि मानव को इन पदार्थों से स्वाभाविक घृणा है।

12. मांसाहारी जानवरों को देखते ही उनके भक्ष्य जानवर भाग खड़े होते हैं और चीखते व चिल्लाते हैं, जैसे बिल्ली को देखते ही पक्षी, गिलहरी आदि भागकर चीखते व चिल्लाते हैं, जबकि फारुख साहब! आपको सहज स्थिति में देखकर बकरे, मुर्गे, गाय, गधे, भैंस भाग नहीं सकते और न भयभीत होकर चीखने ही लगेंगे।

महाशय! क्या ये बारह भेद तथा पूर्ववर्णित भेद आपकी समझ में नहीं आते? जिस कुदरत वा खुदा पर यह आरोप लगा रहे हैं कि उसने पशुओं को हमारे खाने के लिये बनाया, तो वह खुदा कुरान का मनुष्यवत् खुदा हो सकता है अथवा हजरत मुहम्मद का आदेश हो सकता है, न कि सृष्टि का सृजन करने हारा, पालनहार व नियन्ता परमात्मा। क्योंकि यदि ईश्वर को यही स्वीकार होता तो, वह हमारी शरीर रचना भी मांसाहारियों के समान क्यों नहीं बनाता? **आप कहते हैं–**

'परमेश्वर ने संसार में भोजन समस्या चाहे, वह वनस्पतियों के भोजन की समस्या हो अथवा प्राणियों के भोजन का, इसी प्रकार हल निकाला है कि एक दूसरे से भोजन प्राप्त करते हैं। एक का जीवन दूसरे पर निर्भर है। बिल्ली चूहे को पकड़ती है, सिंह बकरी, गाय और हिरण को, छोटी मछली को बड़ी मछली खाती है।'

समीक्षा– धन्य हो फारुख साहब, अपनी बुद्धि का दिवाला निकालकर मछली, शेर, कुत्ते, बिल्ली से प्रेरणा लेने लगे। पशुओं के साथ मांसाहारी वनस्पतियों की भी चर्चा करने लगे। इस सृष्टि में सबका भोजन परमात्मा ने ही निश्चित कर रखा है और जैसा उसके लिये भोजन नियत किया है, वैसी ही उसकी शरीर रचना की है। आपको मांसाहारी जानवरों के अतिरिक्त घास आदि खाने वाले पशु और फल खाने वाले बन्दर आदि से सीख क्यों नहीं मिल रही, जबकि हमारी शरीर रचना परमात्मा ने उनके समान ही बनाई है। यदि कहो कि दोनों से सीख लेकर वनस्पति व मांस-अण्डे खाकर संकर नस्ल बनना ठीक है, तो जरा बताइये कि इस शरीर रचना व क्रिया विज्ञान को कैसे संकर बनाओगे? बन्धुवर! जरा विचारिये! हठ करना

ठीक नहीं। हिंसकों, क्रूरों को अपना गुरु मत बनाइये। मांसाहारी वनस्पतियों, बैक्टीरिया और वायरसों का उदाहरण देना यहाँ कैसे संगत हो सकता है? कहीं सूर्य की ऊर्जा से द्रव्यमान की क्षति का उदाहरण देकर सामान्य बुद्धि वाले पाठकों को यह बताना चाहते हैं कि आप विज्ञान के बड़े जानकार हैं। इन बातों को सामान्य छात्र भी जानते हैं। मैं इन पर चर्चा करके लेख का आकार बढ़ाना अनावश्यक समझता हूँ। मांसाहारियों के मांस में हराम के विषय में **आपका कथन है–**

'मांसाहारी पशुओं के मांस का भी वास्तव में नैतिक कारणों से ही हराम माना है। उसका मांस अपने भीतर पशुओं ('पशुता' शब्द होना योग्य है), जंगलीपन और निर्दयता उत्पन्न करते हैं। स्पष्ट रूप से मानवता के विरुद्ध है।'' अन्तिम दो वाक्यों की संगति ही नहीं बैठती। यहाँ दोनों वाक्यों को जोड़कर लिखना चाहिये था– जंगलीपन और निर्लज्जता स्पष्ट रूप से मानवता के विरुद्ध है। इसके ऊपर आप लिखते हैं– 'अन्न का भी मनुष्य के स्वभाव पर प्रभाव पड़ता है।'

समीक्षा– यहाँ एक सत्य को आपने भी स्वीकार किया कि मांसाहारी प्राणी जंगली, निर्लज्ज व निर्दयी होते हैं। उनका मांस खाने से उनके ये दुर्गण मनुष्य में भी आ सकते हैं, इस कारण इनका मांस खाना हराम। महाशय मैं पूछना चाहूंगा कि शेर, कुत्ते, भेड़िये आदि बकरी, गाय, हिरन, खरगोश आदि को खाकर निर्दयी, जंगली व निर्लज्ज बन सकते हैं, तब मांसाहारी मनुष्य इन्हीं प्राणियों को खाकर बुद्धिशाली, दयालु व सज्जन कैसे बना रह सकता है? तब तो इन मांसाहारी मनुष्यों की अपेक्षा गाय, बैल, भेड़, बकरी, गधा यहाँ तक कि सूअर भी अच्छा है, क्योंकि वे मांस न खाने से उपर्युक्त दुर्गुणों से बच सकते हैं, और बचे हुये हैं। हाँ, सूअर कभी–कभी मांस भी खा जाता है, तो उसे थोड़ा निम्न कह सकते हैं। ध्यान रहे, यह दोष मांसाहारियों पर मैं नहीं लगा रहा बल्कि आपका तर्क ही लगा रहा है। मैंने तो आपके विचार का खुलासा ही किया है, साथ ही मैं इससे सहमत अवश्य हूँ।

मांसाहार व दया

आपका लिखना है–

‘यह (इस) सृष्टि में जीवन के साथ मृत्यु का सिद्धान्त भी चल रहा है। स्वास्थ्य के साथ बीमारी और आराम के साथ कष्ट का भी नियम दिखाई देता है। मनुष्य को संसार में परिश्रम के बीच रखा गया है। जो मानव जीवन ईश्वर की दया का परिचायक है, तो मृत्यु में भी दया कार्यशील है। मृत्यु से वास्तविक जीवन के द्वार खुलते हैं’

आश्चर्य की बात है कि जो प्राणी बीमारी के कारण मृत्यु प्राप्त करता है, तब कोई भी ऐसा नहीं कहता कि ईश्वर का व्यवहार प्राणियों के साथ निर्दयता का है, उसने जीवधारियों को मृत्यु के कष्ट से मुक्त नहीं रखा है, किन्तु जो यही कष्ट मांस प्राप्त करने हेतु दिया जाये, तब उसके ऊपर आक्षेप किया जाता है। जब काटने में कष्ट होता है, इससे सामान्य रीति से मृत्यु होने में ज्यादा कष्ट होता है (इसी प्रकार बहुत कुछ अनर्गल लिखकर अपने ज्ञान का प्रदर्शन करने का प्रयास किया गया है।)

समीक्षा– यह तो सत्य है कि सुख दुःख, जीवन–मरण साथ–2 चलते हैं परन्तु ईश्वर किसी को मारता है, तो उसे जीवन भी वही देता है। इस कारण वह मारने का अधिकारी भी है। ईश्वर न्यायकारी व कर्मफलप्रदाता है, इससे वह सब प्राणियों को कर्मानुसार सुख दुःख, जीवन मरण देता है, लेकिन **आप लोगों ने बकरे, मुर्गे, गाय आदि निरीह जानकर खा खाकर अपने पेट को कब्रिस्तान बनाना ही सीखा है अथवा किसी मृत जानवर को जिलाना भी आता है? यदि नहीं, तो मारने का क्या अधिकार?** खुदा की बराबरी कैसे करने लगे? वह तो सृष्टि रचता, पालन, धारण, संहार करता है परन्तु आप जानवरों को मार खाकर ही खुदा बन बैठे। धन्य हो फारुखजी! मैं पूछता हूँ कि क्या खुदा मनुष्य को नहीं मारता, कष्ट देता? यदि हाँ, तो दयालु महाशय! अपने बच्चों, माता–पिता, कुटुम्बीजनों को मार खाकर उन्हें भी अपनी दया का प्रसाद देकर

वास्तविक जीवन का रास्ता दिखा दीजिये। फारुख जी! आप तो बड़े दयालु (?) हैं, जो बेचारे दुर्बल पशु पक्षियों, मूक जानवरों की गर्दन पर छुरियाँ चलाते हैं, उन्हें रेत-2 कर काटकर खाकर खुदा की प्यारी न्यारी मौत से मिलाते हैं। इस झूठे जीवन से मुक्ति दिलाकर वास्तविक जीवन का उपहार देते हैं और ऐसा करके खुदा के अनिवार्य नियम पालन में खुदा का सहयोग करते हैं। परन्तु मोहम्मद फारुखजी! आप कितने निर्दयी हैं, अपने परिवार व समाज वालों के प्रति, जो इन्हें रोगी, गरीब दुःखी देखकर भी मौतरूपी प्रसाद का स्वाद नहीं चखाते। वे बेचारे यों ही स्वाभाविक मौत का दुःख भोगते रहते हैं। खुदा बेचारा एक-2 करके सबको मारने में कष्ट सहता रहता है, परन्तु आपको न तो खुदा पर ही दया आती है, जो सब मोमिनों को मारने में कष्ट उठाता है। पशुओं व पक्षियों को मारने का काम तो आपने अपने ऊपर ले लिया परन्तु मनुष्य को मारने का काम बेचारे खुदा का ही रहा। आप जैसे परोपकारी, धर्मात्मा, दयालु कहाँ मिलेंगे, जो सब जानवरों पर कृपा की वर्षा करके जन्नत में भेजने के ठेकेदार बने हैं, परन्तु अपनों के लिये दोजख ही स्वीकार है। आपने खुदा और खुदा के हाथों (बीमारी, बुढ़ापे आदि के माध्यम से) सता-2 कर मरने के लिये अपने परिजनों को छोड़ दिया है और आप स्वयं भी उसी कष्ट को अपनाने के लिये तैयार हैं। क्यों न आप भी बकरे जैसी कुर्बानी देकर खुदा के प्यारे होने को तैयार होते? धन्य हो तर्कशास्त्रिन्! ऐसा विचित्र व मिथ्या कुतर्क आपको मांस, अण्डे खाकर ही सूझा होगा। महाशय! कुरान तो बूढ़े, बच्चे, अनाथों को प्यार करना सिखाता है। मनुष्यों में मोमिनों से ही प्यार करना सिखाता है, परन्तु आप इनकी उपेक्षा करके बकरे, मुर्गों से ही प्यार करने की बात कर रहे हैं। आप मृत्यु को अल्लाह की महान् निशानियों में से एक निशानी बता रहे हैं। शोक है इस महान् निशानी से स्वयं को वंचित रख रहे हैं। पैर में कांटा चुभते ही उछल पड़ते हैं। बीमार होते ही चिकित्सालय जाते हैं, आग पर हाथ लगते ही कराह उठते हैं, परन्तु गला कटाने को तैयार नहीं होते, जिससे वास्तविक जीवन को प्राप्त कर सकें, जबकि पशुओं को काट भूनकर खा जाने को दया बता रहे हैं। शोक है, आप जैसे बुद्धिजीवी कहलाने का

ढोंग करने वाले मांसाहारियों पर। रसना की इतनी गुलामी मत करिए। मजहबी उन्माद को बुद्धि की चमकीली चादर से ढकने की कोशिश मत करिये, परमात्मा से डरिये। **आपका कथन है–**

'मृत्यु में अपने लिये असंख्य नैतिक लाभ हैं। संसार में जितने हानिकारक पशु, जंतु और कीटाणु देखने को मिलते हैं, उनमें अपने लिये बहुत सी बोध सामग्री मौजूद है – अपने पशुओं को अल्लाह की महानता पर न्यौछावर करना – बंदगी का तकाजा है।'

समीक्षा– यह सत्य है कि आत्मरक्षार्थ एवं सार्वजनिक हितार्थ हानिकारक प्राणियों को दण्डित किया जा सकता है, परन्तु यह भी तथ्य है कि हमारी भाँति दूसरे प्राणियों को भी जीने का अधिकार है। हानिकारक हिंसक जानवरों का वध करना भी मर्यादा के अन्दर राजा का अधिकार है। निरीह व निर्दोष जानवरों को मार खाकर जिह्वा को तृप्त करना, भिन्न प्रकार का घोर कुकर्म है। आपका मानना है कि अल्लाह को अपनी प्यारी वस्तु भेंट करनी चाहिये, तो मैं पूछता हूँ कि बकरा आपने तो पैदा किया नहीं है, तब आपको उसकी बलि देने का क्या अधिकार? फिर क्या बकरा आपको स्वयं के शरीर से अथवा परिजनों से भी प्रिय है? यदि नहीं, तो उनकी अथवा अपनी बलि क्यों नहीं देते? **आप पूजा कर रहे हैं और जानवर छटपटा रहे हैं, दम तोड़ रहे हैं, जबकि वे भी उसी खुदा के पैदा किये हुये हैं, उसी की संतान हैं, यह कैसा घोर कुकर्म कर रहे हैं?** यदि खुदा को मांस और लहू ही चाहिये और इसी प्रकार किसी हिन्दू देवी-देवता को भी यही भोजन चाहिये, तो वह तो सबको मारता ही है, तब भी पेट नहीं भरता? खुदा वा भगवान् यदि भूखा हो, तो स्वयं मार लेगा, आपको क्यों यह काम सौंप रखा है? फिर आपका कुरान तो यह भी कहता है–

'खुदा तक न तो उनका गोश्त पहुँचता है और न खून, बल्कि उस तक तुम्हारी परहेजगारी पहुंचती है।'

अब बताइये आप जानवरों को खुदा के लिये मारते हैं वा अपनी रसना को तृप्त करने के लिये? अरे महाशय! खुदा को

प्रसन्न करना है, तो बुराइयों से परहेज करो, खुदा की सन्तान पर दया करना सीखो। उनके दुख को अपने दुःख के समान समझो। मानवमात्र को भाई समझ कर व्यवहार करो। यदि रसना को ही प्रसन्न रखना है, तो परमात्मा के बनाये हुये दूध, घृत, फल, मक्खन, मेवे, अन्न आदि उत्तमोत्तम पदार्थ प्रेम से खाइये।

आश्चर्य है कि आप जानवरों के अंग-2 छेदन को धर्म बताते हुये भी प्राणियों के प्रति दयालुता के उदाहरण भी दे रहे हैं। यह दोहरा चरित्र अपनाना अच्छा नहीं। आपके अनुसार कुत्ते पर दया करके बदचलन स्त्री को मोक्ष मिला और सर्वोपकारक गाय को मारकर मोक्ष का मार्ग बता रहे हैं। कुत्ते को बचाना और गाय को मारना बराबर हो गये, तब तो दूध गाय का नहीं, कुत्ती का पीना चाहिये, क्योंकि उसके पालने से मोक्ष भी मिल जायेगा और पीने को सुन्दर मीठा दूध भी, साथ में कुत्ती घर की रखवाली भी करेगी, वह अलग लाभ। बन्धुवर! यह कहें तो ठीक रहेगा कि प्राणिमात्र पर दया करने से ही खुदा प्रसन्न होता है। **आपका कथन है–**

'जबह करने के लिये (पशुवध के लिये) तीखी छुरी हो, जिससे कम से कम कष्ट हो।'

मैं तो यह सुनता हूँ कि हिन्दू कसाई पशुओं को झटके से मारते हैं और मुसलमान गला रेतकर धीरे-2 मारने को हलाल कहते हैं। उन्हें झटके से मारे पशु का मांस खाना भी पसन्द नहीं, तब यह आप कहां से लिख रहे हैं? मैं यह नहीं कहता कि हिन्दू कसाई भले हैं और मुस्लिम बुरे। दोनों ही पापी हैं, पुनरपि जो जितना कष्ट देकर मारता है, वह उतना ही अधिक क्रूर व पापी है। **आपका कथन है–**

'इस जंगल को उत्पन्न करने का मुख्योद्देश्य मनुष्य है, न कि पशु। जो मनुष्य को इस सृष्टि से अलग किया जाय, तो यह संसार बिल्कुल अन्धकारमय हो जायेगा। सम्पूर्ण आकर्षण एवं प्रियता और यहाँ तक कि सभी साज सज्जा के सामान मनुष्य के बिना निरर्थक हैं। एक मनुष्य का ही अस्तित्व है, जिसके ऊपर सृष्टि की प्रत्येक चीज में सार्थकता और उद्देश्यता की आत्मा दौड़ रही है,

संसार की सभी चीजें मनुष्य के लिये उत्पन्न की गई हैं, ईश्वर की नेमत को (कृपा को) हराम बताना, स्वयं एक बड़ा ही जुल्म है, जिसकी ओर लोगों का ध्यान नहीं जाता। मांसाहार का विरोध ईश्वर की एक बहुत बड़ी कृपा का इंकार है। ईश्वर ने मनुष्यों के लाभ के लिये, जो पशु पैदा किये हैं, तब उनसे सम्पूर्ण लाभ उठाने का अधिकार प्राप्त होता है।'

समीक्षा– यह तो सत्य है कि मनुष्य संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। यह सृष्टि मुख्यतः मनुष्य के लिये ही है। वेद भी इसका समर्थन करता है– **'तुभ्यं भुवनानि तस्थिरे तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः'** ऋग्वेद अर्थात् हे मनुष्य! तेरे लिये ही लोक ठहरे हुये हैं। तेरे लिये ही नदियां बहती हैं। मनुष्य को सब प्राणियों का राजा कहें, तो भी अनुचित नहीं होगा, परन्तु क्या राजा उसे कहते हैं, जो प्रजा को मारकर खा जाये? पिता का क्या यह कर्तव्य है कि वह सन्तान को खा जाये? नहीं, कदापि नहीं। राजा व पिता दोनों का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रजा वा सन्तान का पालन और रक्षण करें। मनुष्य भोग तथा कर्म दोनों का अधिकार रखता है। इसे ही निज कर्मों के आधार पर दूसरे प्राणियों के रूप में जन्म लेना पड़ता है। जहाँ धर्माधर्म, कर्तव्याकर्तव्य का न तो बोध रहता है और न ही आवश्यकता। ये योनियां जीवात्मा के लिये कारागार के समान हैं। जब तक शुभाशुभ कर्म एक सन्तुलन विशेष को प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक उन्हीं योनियों में रहना पड़ता है। पुनः मनुष्य योनि में अवश्य ही आता है। किसी की क्या सामर्थ्य वा अधिकार कि उसे कारागार से मुक्त करके मनुष्य योनि में भेज सके। मनुष्य के उपयोगार्थ जानवर अवश्य हैं। कुछ दूध हेतु, कुछ ऊन, कृषि आदि के लिये, स्वाभाविक मृत के चमड़े के लिये, परन्तु उन्हें मारकर मांस खाने के लिये तो शेर, चीते, कुत्ते, बिल्ली ही बनाये हैं। वन्य जानवर पर्यावरण रक्षा में भी सहयोग देकर मानव जाति के लिये परोक्ष सहयोग देते हैं, कुछ हानिकारक भी हैं। वे पाप का दण्ड देने हेतु भी माने जा सकते हैं पुनरपि आत्मरक्षार्थ आपत्तिकाल में उनका वध भी किया जा सकता है, परन्तु खाने के लिये नहीं। केवल इनका ही नहीं बल्कि मारने आने वाले हत्यारे मनुष्य का भी वध

किया जा सकता है, परन्तु वह खाद्य नहीं। यदि आप मानते हैं कि कुरान में खुदा ने कहा है कि मांस खाने हेतु जानवर बनाये हैं, तो आपका खुदा वैसा शरीर बनाना क्यों भूल गया? अब तक खुदा की भूल बराबर चल रही है। आपको चाहिये कि इबादत करते समय खुदा से कहें कि "हे खुदा! आपने हमारे लिये भोज्य जानवर तो बना दिये, परन्तु आंत बकरी, गाय, बन्दर जैसी बना दी। ओ भूले खुदा! अब तो भूल सुधार ले अथवा ये कह दें कि कुरान मैंने बनाया ही नहीं, यह तो मुहम्मद साहब की कल्पना है। जब कुरान और सृष्टि में तालमेल ही नहीं, तो कुरान खुदाई पुस्तक कहाँ? यह विषय दूसरा है, इस कारण यहां चर्चा करना उचित व आवश्यक नहीं है, फिर भी आप खुदा की ही रचना कुरान को मानें, तो खुदा से कहें कि हे खुदा! तेरी भूल के कारण बड़े-2 वैज्ञानिक मांसाहार के विरुद्ध चेतावनी दे रहे हैं। साथ ही यह भी पूछिये कि मोटे ताजे सूअर को तूने क्यों बनाया? क्या गन्दगी साफ करने मात्र के लिये, तो उसमें चर्बी का भण्डार अन्य जानवरों से अधिक क्यों भर डाला? मांसाहारियों का जी भी ललचाये, परन्तु खुदा ने हराम भी बता दिया। बन्धु! ध्यान रखें, परमात्मा की प्रत्येक वस्तु खाने के लिये नहीं है। सभी प्राणियों का भिन्न-2 सर्वहित उपयोग है, केवल मानव हितार्थ नहीं। कहो जी! खुदा ने तो जहर भी बनाया है, तो क्या उसे खाकर मर जाया जाये? गन्दगी भी बनाई, कीट, पतंग, मक्खी, मच्छर, गुबरीले बनाये, तब क्या सबको खाया जाय? जरा विज्ञान की गहराइयों तथा धर्म के रहस्यों को समझने का प्रयास करें। परमात्मा की सुन्दर व विवेकपूर्ण रचना पर विचार करें। खुद खुदा बनकर मालिक बनने का दुःसाहस न करें। मनुष्य का अधिकार परमात्मा की आज्ञाओं का पालन करते हुये, उसकी उपासना करना है न कि स्वयं परमात्मा बनना।

आप बकरे को काटने की तुलना सर्जन की सर्जरी से कर रहे हैं, है न कोरी महामूर्खता! डाक्टर तो बच्चे को रोगमुक्त करने हेतु चीर फाड़ करता है, न कि काटकर खाने के लिये, जबकि मांसाहारी दुष्ट डाकू की भाँति प्राणियों की निर्मम हत्या करके अपना पेट भरते हैं। ऐसी तुलना करने की बुद्धि भी मांसाहार से ही प्राप्त

हुई होगी। ऐसी डाक्टरी करनी है, तो बेचारे कमजोर जानवर ही मिले हैं। अपनी और अपने परिजनों की ऐसी सर्जरी करें न, तब आपको ज्ञात हो जायेगा कि दया और क्रूरता की क्या परिभाषा है और दोनों में क्या भेद है?

प्राचीन इतिहास एवं मांसाहार

आपका कथन है–

'इतिहास से यह बात प्रमाणित है कि मनुष्य मांस का उपयोग भोजन के रूप में करता हुआ आया है। वैदिक काल में भारतवर्ष में लोग मांस खाते थे। तीर कमान द्वारा पशुओं के शिकार का प्रचलन था। रामचन्द्रजी को सीताजी द्वारा हिरण के शिकार के लिये आग्रह करना और उनका हिरण के शिकार हेतु बाहर निकलना, यह तुलसीदासजी के वर्णन से प्रमाणित है। तदुपरान्त राजा दशरथ ने हिरण समझकर श्रवणकुमार को तीर मारना भी निर्विवाद के रूप से सत्य माना गया है।'

समीक्षा– मांसाहार की बात को किस आधार पर मानव इतिहास का अनिवार्य अंग मान रहे हैं? वैज्ञानिक आधार पर हम चर्चा कर ही चुके हैं। आप कहते हैं कि मनुष्य को परमात्मा ने हथियार बनाने की बुद्धि मांस खाने के लिये ही दी है। मैं पूछता हूँ कि आपके बाबा आदम और हव्वा को जब खुदा ने पैदा किया, तब उनको भी छुरी तलवार भेंट की थी वा नहीं? उनको खुदा ने एक वृक्ष विशेष का फल खाने का निषेध किया था? इसका अर्थ यह हुआ कि अन्य फल खाने का निषेध नहीं था। इससे स्पष्ट होता है कि आदम और हव्वा फलाहारी थे न कि मांसाहारी। खुदा ने उनको यह तो नहीं कहा कि सूअर मत खाना, मुर्गा खाना आदि। यह तो मुहम्मद साहब की जीभ का कमाल है। अब किस फल का निषेध किया था, यह तो आप तथा आपका खुदा वा शैतान जाने। हमारा आशय यही है कि मनुष्य फलाहारी ही रहा है। अन्न, दूध आदि खाना पीना बाद में प्रारम्भ हुआ है, परन्तु बहुत बाद में नहीं। हाँ,

माँ का दूध तो प्राथमिक तथा अनिवार्य भोजन है। मानवमात्र के (परमात्मा के पश्चात्) प्रथम धर्मोपदेष्टा भगवान् मनु ने मांसाहार में एक नहीं बल्कि आठ पापी बताये हैं।

''अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः।'' (मनुस्मृति 5.51)

अर्थात् मांसाहार की अनुमति देने वाला, मांस काटने वाला, पशु मारने वाला, खरीदने व बेचने वाला, पकाने, परोसने व खाने वाला ये आठ घोर पापी हैं। जब मानवेतिहास का प्रारम्भ वेदज्ञान व मनु के उपदेशों से प्रारम्भ हुआ हो, तो वहां मांसाहार को स्थान कैसे मिल सकता है? हां, म्लेच्छ, असुर, राक्षस आदि लोग धीरे-2 पथभ्रष्ट होकर मांसाहार की ओर आकृष्ट हुये। आर्यों(श्रेष्ठ मनुष्यों) का इन मांसाहारियों से सतत संघर्ष ही होता रहा। आपने श्रीराम का उदाहरण देकर मांसाहार की ऐतिहासिकता एवं औचित्य को सिद्ध करने का प्रयास किया है। इस प्रसंग में वाल्मीकि रामायण पर गम्भीर विचार करना आवश्यक है। जब मारीच स्वर्णमृग के रूप में सीताजी को दिखाई दिया और उन्होंने श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी को उसे दिखाया। देखते ही लक्ष्मणजी ने कहा-

''अहं मन्ये मारीचं राक्षसं मृगम्
अनेन निहता राम राजानः कामरूपिणा।''
(अरण्य काण्ड 34.5,6)

अर्थात् यह मृग के रूप में राक्षस मारीच आया है, ऐसा मैं मानता हूँ। इसी इच्छाधारी राक्षस ने अनेक राजाओं का वध किया है। सीताजी ने उसे जीवित पकड़ कर लाने का आग्रह किया था, न कि मारकर लाने के लिये। यदि कहें कि जीवित ही पकड़ना था, तो धनुष बाण ले जाने की क्या आवश्यकता थी? इस विषय में मेरा मानना है कि मृग को दौड़कर हाथों से नहीं पकड़ा जा सकता, बल्कि मोहनास्त्र आदि के द्वारा बांध कर ही पकड़ा जा सकता है। इस कारण धनुष बाण लेकर गये। इसके साथ ही क्षत्रिय को निरस्त्र, निःशस्त्र रहना भी नहीं चाहिये। फिर उन्हें यह आशंका थी ही कि

मृग मारीच है, तब तो सशस्त्र होकर जाना अनिवार्य ही था। यद्यपि वाल्मीकि रामायण में उसे जीवित न पकड़ पाने की स्थिति में ही मारकर लाने की बात कही गई है और उसका हेतु यह दिया है कि सीताजी उसकी चमड़ी से आसन बनाना चाहती थीं। मैं पूछता हूं कि यदि चर्म के आसन एवं बिस्तर से ही प्रीति होती, तो वे स्थान-2 पर पर्ण, घास, पुष्पों की शय्यायें नहीं बनाते। क्या उन्हें जंगल में कहीं कोई सुन्दर जानवर मिले ही नहीं थे। इतने सुन्दर नहीं भी मिले हों, तो भी जंगल में अनेक सुन्दर हिरण, बाघ, चीता आदि सुन्दर चमड़ी वाले जानवर मिले ही होंगे। तब क्यों नहीं उनकी चमड़ी के लिये किसी को मारा? श्रीरामजी ने कई स्थानों पर लक्ष्मणजी से फूल, घास, लकड़ी, पत्ते लाकर बिस्तर बनाने का आदेश दिया है। क्यों नहीं किसी जानवर को मारकर चमड़ा लाने का आदेश दिया? इससे आरामदायक बिस्तर, आसन बन सकते थे। जब श्रीरामजी उस मृग के पीछे चलने को उद्यत होते हैं, तब उन्होंने लक्ष्मणजी से कहा-

"यदि वायं यथा यन्मां भवेद् वदसि लक्ष्मण।
मायैषा राक्षसस्येति कर्त्तव्योऽस्य वधो मया।।

एतेन हि नृशंसेन मारीचेना कृतात्मना।
वने विचरता पूर्वं हिंसिता मुनिपुंगवाः।"

(अरण्य काण्ड 34.38,39)

अर्थात् हे लक्ष्मण! तुम मुझसे जैसा कह रहे हो, यदि वैसा ही यह मृग हो, यदि राक्षसी माया ही हो, तो इसे मारना मेरा कर्तव्य है। क्योंकि इस दुष्ट ने मुनियों की हत्या की है। इससे स्पष्ट है कि श्रीरामजी ने उस जानवर को मारीच ही समझा था न कि स्वर्णमृग। हमें यह विचारना चाहिये कि लक्ष्मणजी उनके साथ सेवा हेतु ही आये थे। वे ही स्थान-स्थान पर कुटी व शय्या तैयार करते हैं, जल, कन्द, मूल, फल लाते हैं। तब यदि वह जानवर ही पकड़ना वा मारना था, तो क्या यह कार्य लक्ष्मणजी नहीं कर सकते थे? जो लक्ष्मणजी बड़े-बड़े योद्धाओं से घोर युद्ध करने में समर्थ थे, वे उस मृग को मार वा पकड़ नहीं सकते थे? तब क्यों श्रीरामजी यह

साधारण काम करने हेतु स्वयं गये और लक्ष्मणजी को वहां सीताजी की रक्षार्थ नियुक्त किया? क्यों नहीं, सदैव सेवातत्पर अनुज लक्ष्मणजी को यह कार्य सौंपा? इससे स्पष्ट है कि श्रीरामजी स्थिति की गम्भीरता समझ रहे थे। मारीच के पराक्रम व माया को जानकर, लक्ष्मणजी को भेजकर, उन्हें संकट में नहीं डालना चाहते थे। उन्हें गम्भीर परिस्थितियों में अपने पौरुष का विश्वास था। इस प्रकार की परिस्थिति उस समय भी आयी थी, जब खर और दूषण ने 14 हजार राक्षसों की सेना लेकर आक्रमण कर दिया था। उस समय श्रीरामजी ने लक्ष्मणजी को युद्ध का आदेश न देकर स्वयं ही युद्ध किया था और लक्ष्मणजी को सीताजी की रक्षार्थ नियुक्त किया था। इसी प्रकार यहां भी यही परिस्थिति बनी थी। इस सब पर गम्भीरता से विचारने पर यह सिद्ध होता है कि श्रीरामजी शिकार हेतु नहीं बल्कि उसे मारीच जानकर घोर युद्ध करने गये थे। हम इस विषय की यथार्थता जानने हेतु रामायण के अन्य प्रसंगों पर भी दृष्टि डालें, तो पायेंगे कि उस काल में किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होती थी, सिवा दुष्ट दमनार्थ युद्ध के। जिस समय महात्मा भरतजी चित्रकूट में श्रीरामजी से मिलने आते हैं, तब श्रीरामजी ने मिलते ही उन्हें कुशलक्षेम पूछते हुये सम्पूर्ण राजनीति का उपदेश किया है। उसमें एक बिन्दु आता है, जिसमें अयोध्या **'हिंसाभिरभिवर्जितः'** कहा है (अयो. कां.100वां सर्ग, श्लोक 44)।

अर्थात् अयोध्या हिंसा से पूर्ण मुक्त थी, तब शिकार कैसे किया जा सकता है? जब श्रीराम का राजतिलक होने वाला था, तब महाराज दशरथजी ने श्रीरामजी को उपदेश देते हुये 18 व्यसनों से दूर रहने को कहा था, ये 18 व्यसन भगवान् मनुप्रोक्त कामज व क्रोधज व्यसन हैं, जिनमें शिकार खेलना राजाओं के लिये प्रथम दुर्व्यसन बताया है। तब श्रीरामजी व दशरथजी का शिकार खेलना, हिंसा करना कैसे सिद्ध हो सकता है? यदि कोई यह प्रश्न करे कि जब श्रीरामजी शिकार खेलते ही नहीं थे, तब उन्हें उपदेश देकर निषेध करने की आवश्यकता कैसे पड़ी? इसका उत्तर स्वयं दशरथजी के वचनों से ही मिल जाता है। वे कहते हैं–

“कामतस्त्वं प्रकृत्यैव निर्णीतो गुणवानिति।
गुणवत्यपि तु स्नेहात् पुत्र वक्ष्यामि ते हितम्।।”

(अयो. कां. सर्ग 3.41)

अर्थात् यद्यपि तुम स्वभाव से ही गुणवान् हो और तुम्हारे विषय में सबका यही निर्णय है, तथापि मैं स्नेहवश सद्गुणसम्पन्न होने पर भी तुम्हें हित की बातें कहता हूँ। इससे स्पष्ट है कि श्रीरामजी में उपर्युक्त व्यसन नहीं होने पर भी पिता होने के नाते उपदेश करना कर्तव्य समझ कर ही ऐसा कहा था। यदि श्रवणकुमार की कथा का आश्रय लेकर शिकार की बात सिद्ध करें, तो प्रथम तो यह निवेदन करूं कि आपने हिरण के धोखे में श्रवण को मारना लिखा है, यह बात यह स्पष्ट करती है कि आपने रामायण तथा रामचरितमानस दोनों को ही नहीं पढ़ा है, अन्यथा हाथी के स्थान पर हिरण नहीं कहते। रामचरितमानस में यह कथा संकेत मात्र है, जबकि वाल्मीकि रामायण में विस्तार से है। यहां दशरथजी को **‘व्यायामकृतसंकल्पः’** कहा है। इससे प्रतीत होता है कि व्यायाम अथवा धनुर्विद्या के अभ्यास हेतु ही वे सरयू नदी के किनारे गये, न कि मांस के लिये। इसमें लिखा है-

निपाने महिषं रात्रौ गतं वाभ्यागतं मृगम्।
अन्यद् वा श्वापदं किंचिज्जिघांसुरजितेन्द्रियः।।

(अयो.का. सर्ग 63.21)

यहाँ महिष, गज, मृग तथा श्वापद, इन चार का अनुमान लगाया है। यहां सामान्य अर्थ लेकर देखें, तो महिष, गज, मृग (यदि हिरण मानें) तो अहिंसक हैं। जबकि श्वापद अर्थात् बाघ हिंसक जानवर है, तब इनकी परस्पर संगति नहीं बैठती है। इस कारण इन चारों को ही हिंसक मानना पड़ेगा। महिष - जंगली भैंसा उपद्रवी होता ही है, हाथी भी मदोन्मत हो सकता है, परन्तु हिरण उपद्रवकारी नहीं माना जा सकता, तब मृग का अर्थ शेर मानना समीचीन होगा। इससे सिद्ध हुआ है कि दशरथजी इन उपद्रवी व हिंसक जानवरों को मारने के विषय में सोच रहे होंगे, फिर भी ऐसा सोचते हुए

स्वयं को अजितेन्द्रिय कहा अर्थात् उस कर्म को पाप तथा राजाओं के सर्वोपरि गुण जितेन्द्रियता के प्रतिकूल मानकर निन्दनीय अनुभव कर रहे हैं। इससे विदित होता है कि शिकार खेलना उस समय प्रचलित नहीं था, अपितु इसे बुरा माना जाता था। धनुर्विद्या का अभ्यास बिना किसी को मारे करते थे। ऐसे हिंसक व उपद्रवी जानवर, जो जन सामान्य के लिये संकट पैदा कर रहे होते थे, उन्हें ही मारने का राजा अधिकार देता था। दशरथजी ने बिना संकट के ही मारने का विचार किया वा मारा भी, इसी कारण स्वयं को अवगुणी बता रहे हैं।

मैं मानता हूँ कि रामायण व महाभारत में अनेकत्र शिकार खेलने का वर्णन आया है। मैं दृढ़ता से कहना चाहूंगा कि ऐसे सभी प्रसंग मध्यकालीन मांसभोजियों द्वारा प्रक्षिप्त किये गये हैं। इसके पीछे मेरा हेतु यह है कि श्रीरामजी अथवा उस समय के क्षत्रियों व अन्य मनुष्यों को धर्मात्मा, वेदव्रती व अहिंसक कहा है, वे वेदविरुद्ध दुष्ट कर्म कैसे कर सकते हैं? जहाँ एक ओर श्रीरामजी को **'रक्षिता जीवलोकस्य**' कहा है (वा. रामा.), वे जीवों की हत्या कैसे कर सकते हैं? जो श्रीरामजी बाली के वध के समय वध को उचित सिद्ध करने हेतु भगवान् मनु के आदेश का प्रमाण देते हैं तथा स्वयं को उन्हीं की बतलायी मर्यादा से बंधा हुआ बताते हैं, वे ही श्रीरामजी भगवान् मनु के शिकार खेलने को सर्वोपरि व सर्वप्रथम दुर्व्यसन व घोर पाप बताने पर भी शिकार कैसे कर सकते हैं? यदि करें तो **'रामोद्विर्नभाषते'** का क्या होगा? अर्थात् श्रीरामजी के विषय में प्रसिद्ध था कि वे जो कहते हैं, वही करते हैं। बार-बार विचार नहीं बदलते। ऐसे महान् भगवान् राम पर शिकार का दोष मढ़ना स्वयं एक भारी पाप है। इस कारण **स्पष्टतः हिंसा के प्रसंग प्रक्षिप्त हैं तथा धूर्तों की शरारत है।**

आज कुछ महानुभाव मांसाहार को क्षत्रियों के लिए विहित बताते हैं, वस्तुतः वे वैदिक सनातन क्षात्रधर्म को अंशमात्र भी नहीं समझते। जिन भगवान् मनुजी की चर्चा हम कर चुके हैं, वे संसार के प्रथम राजा थे तथा भगवान् श्रीराम प्रसिद्ध क्षत्रिय। जब ये दोनों ही मांसाहार को अधर्म मानते, तो फिर मांसाहार क्षत्रियों के लिए

उचित किसने कहा? **भगवान् मनु तो शिकार खेलने को सर्वप्रथम दोष मानते हैं, तब कौन मूर्ख क्षत्रियों के शिकार खेलने को उचित कह सकता है? क्षत्रिय राजा को ब्राह्मणत्व से युक्त होना अर्थात् वेदों का पूर्ण विद्वान् व योगी होना चाहिये, यह बात भी मनु भगवान् ने कही। यजुर्वेद भाष्य में महर्षि दयानन्दजी महाराज ने राजा व न्यायाधीश को योगी होना अनिवार्य बताया तथा द्वापर युग में संसार प्रसिद्ध योद्धा पितामह भीष्मजी ने अहिंसा को परम धर्म कहा, तब कौन क्षात्रधर्मवित् मांसाहार की वकालत कर सकता है?** हाँ, राक्षस आदि बर्बर लोग अवश्य ही अपने क्रूर स्वभाववश मांसाहार करते थे और इन क्रूरों से क्षत्रियों का सदा युद्ध ही होता रहा।

यदि कोई राक्षस कहलाना चाहकर मांसाहार की वकालत करे, तो उसे भी राक्षसराज महात्मा विभीषण से प्रेरणा लेने का परामर्श दूंगा, दुरात्मा रावण बनने का पक्ष नहीं लूंगा। हाँ, दुर्भाग्य से मध्यकालीन क्षत्रियों में ये दोष अवश्य आ गये थे और उन्हें क्षात्रधर्म के लिए प्रमाण नहीं माना जा सकता। इन दोषों तथा मदिरा, वेश्यागमन आदि पापों ने भारत के उन राजाओं का नाश भी कर डाला।

वैदिक धर्म एवं मांसाहार

आपने लिखा है–

'मांसाहारी (मांसाहार) हिन्दू धर्म के प्रतिकूल नहीं।' इसके लिये आपने मनुस्मृति के कुछ श्लोकों का हिन्दी अर्थ उद्धृत किया है, जिनमें श्राद्ध, पशुबलि व सामान्य मांसाहार को उचित ठहराया है।

समीक्षा– मैं यह मानता हूँ कि मनुस्मृति में आप द्वारा उद्धृत सभी श्लोक उपर्युक्त अर्थों में ही विद्यमान हैं, परन्तु हमारा दृढ़ मत है कि धर्म विरोधी पापियों ने ये प्रक्षेप किये हैं। मनुस्मृति में कुल 2685 श्लोकों में से 1471 प्रक्षिप्त तथा 1214 मूल हैं। इसको पूर्ण स्पष्ट समझने हेतु आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, 427, मन्दिर

वाली गली खारी बावली, दिल्ली-6 द्वारा प्रकाशित तथा डा. सुरेन्द्रकुमारजी द्वारा किये गये मनुस्मृति भाष्य को निष्पक्षता व पूर्वाग्रह मुक्त होकर पढ़ने का कष्ट करें। मुझे पूर्ण विश्वास है कि एक नया प्रकाश मिलेगा तथा भगवान् मनु का धर्म विशुद्ध रूप से चमकने लगेगा। देखिये! मनुजी कहते हैं-

'वर्जयेन्मधुमांसं च' (मनु. 6.14)

अर्थात् मधु = मदकारी पदार्थ तथा मांस वर्जित है।

'ना कृत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत्।।' (मनु. 5.48)

'यो बन्धन वधक्लेशान् प्राणिनां न चिकीर्षति।
स सर्वस्य हितप्रेप्सुः सुखमत्यन्त मश्नुते।।' (मनु. 5.46)

'समुत्पत्ति च मांसस्य वधबन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षणात्।।' (मनु. 5.49)

अर्थात् जो व्यक्ति प्राणियों को बन्धन में डालने, वध करने, उनको पीड़ा पहुँचाने की इच्छा नहीं करता, वह सब प्राणियों का हितैषी अत्यन्त सुख को प्राप्त करता है। प्राणियों की हिंसा किये बिना कभी मांस प्राप्त नहीं होता और जीवों की हत्या करना सुखदायक नहीं है। इस कारण मांस नहीं खाना चाहिये। मांस की उत्पति जैसे होती है, उसको प्राणियों की हत्या और बन्धन के कष्टों को देखकर सब प्रकार के मांस भक्षण से दूर रहें। इसके आगे मांस खाने में आठ पापी बताये हैं, जिन्हें हम पूर्व में ही लिख चुके हैं। इतना ही नहीं, इसी अध्याय में 123 वें श्लोक में खून से अपवित्र पात्र को किसी भी प्रकार शुद्ध न किया जा सकने योग्य लिखा है, ऐसे मनु को कौन मांसाहार का समर्थक कह सकता है? आप वा ऐसे मिथ्या आरोप लगाने वाले शान्ति व निष्पक्षता से विचारें, तो पायेंगे कि यह धूर्तों की लीला है।

आपका कथन है-

ऋग्वेद में कहा है– 'जब मैं देवता के प्रति शत्रुओं पर अपने साथियों के साथ आक्रमण करूंगा। तुम्हारे लिये पुष्ट बैल पकाऊंगा और सोमरस निचोड़ूंगा (ऋग्वेद 10.29.2)। ऋग्वेद 10.28.3 में भी सोमरस पीने और पकाये हुये मांस को खाये जाने का वर्णन है। अर्थववेद 7.6.37 में है– यह जो गाय का दूध और मांस है, वह ज्यादा स्वादिष्ट होता है। उसे (मेहमानों से पहले) खाया न जाय। जो मांस का उपसेवन करके मेहमानों को प्रस्तुत करते हैं, उन्हें यज्ञ का फल मिलता है।' (अर्थववेद 7.6.40-42)

समीक्षा– आपने प्रथम मंत्र का पता ठीक नहीं दिया। सम्भवतः (ऋ. 10.28.2) से अपने विचारों की पुष्टि करना चाहते हैं। मंत्र न देकर केवल भावार्थ लिख देना उचित नहीं, जबकि कई वेद भाष्यकारों के भाष्य सर्वसुलभ हैं। मंत्र का देवता इन्द्र है, जिसका यहाँ अर्थ राजा अथवा आत्मा है। मंत्रार्थ जानने से पूर्व उसके प्रतिपाद्य विषय देवता का ज्ञान अनिवार्य है। यहाँ 'वृषभ' शब्द को देखकर लोगों को बैल का भ्रम हो गया है। वस्तुतः यहाँ 'वृषभ' का अर्थ सुखों की वर्षा करने वाला, आत्मा व राजा है। इस वृषभ को पृथ्वी के अति श्रेष्ठ व सुखपूर्वक आसन पर विराजमान बताया है, तब यह बैल तो हो नहीं सकता। फिर इस वृषभ के साथ सोमरस निचोड़ता हूँ, यह वाक्य नहीं है बल्कि वृषभ के पश्चात् **'यः सुतसोमः पृणाति'** है। यहां **'यः सुतसोमः'** ये शब्द वृषभ के लिये प्रयुक्त हैं अर्थात् जिस वृषभ ने सोमरस तैयार किया है, वह मुझे पूर्णता प्रदान करता है। तब 'वृषभ' का अर्थ बैल नहीं हो सकता क्योंकि बैल तो सोमरस निचोड़ नहीं सकता। इस प्रकार वह वृषभ कोई अन्य मनुष्य होगा या आत्मा। यहाँ जब सोम का अर्थ उपासना रस होगा, तब 'वृषभ' का अर्थ आत्मा होगा। जब 'वृषभ' का अर्थ राजा होगा, तब सोम का अर्थ बदल जायेगा। अगले मंत्र में 'वृषभ' का अर्थ सुख वर्षाने वाला पदार्थ तथा काकड़ासिंगी नामक औषधि विशेष है। इसकी पुष्टि आयुर्वेद ग्रन्थ भावप्रकाश तथा राजनिघण्डु से होती है, जिनमें बैल अर्थ वाले अनेक नाम, इस औषधि विशेष के लिये आते हैं, तब कोई कैसे काकड़ासिंगी को बैल कह सकता है?

**सः रोरुवत् वृषभः तिग्मशृङ्गः वर्ष्मन् तस्थौ वरिमन् आ पृथिव्याः।
विश्वेषु एनं वृजनेषु पामि यः मे कुक्षी सुतसोमः पृणाति।।**
(ऋग्वेद 10.28.2)

इसका ऋषि वसुक्रः है। [**ब्रह्म वै वसुक्रः (ऐ. आ. १.१.२)**] इसका तात्पर्य यह है कि इसकी उत्पति ब्रह्मरूप प्राण रश्मियों से होती है।

देवता- इन्द्रः, छन्द- निचृत् त्रिष्टुप्

वह तीक्ष्ण ध्वनियों से युक्त नाना रश्मियों की वर्षा करने वाला [**शृङ्गम् = शृङ्गाणि ज्वलतोनाम (निघंटु १.१७)। तिग्मम् = वज्रनाम (निघंटु २.२०)**] तीक्ष्ण ज्वालाओं से युक्त, महान् बलों से युक्त सूर्य अंतरिक्ष में श्रेष्ठतापूर्वक स्थित है। प्राणतत्व सभी प्रकार के बलों के द्वारा इस सूर्य का पालन व रक्षण करता है। वह सूर्य प्राण रश्मियों के द्वारा ही अपने कुक्षि अर्थात् उदर में संपीडित सोम तत्व को परिपूर्णता से प्राप्त करता है। सूर्य के अन्दर वर्तमान विज्ञान द्वारा परिभाषित गुरुत्व बल, नाभिकीय प्रबल बल, विद्युत् चुम्बकीय बल आदि के अतिरिक्त अनेक वैदिक विज्ञान में वर्णित अन्य बलों की भी भूमिका होती है। सभी बलों के पीछे विभिन्न प्राण रश्मियों की ही मुख्य भूमिका होती है। सूर्य के केन्द्रीय भाग में विभिन्न नाभिकों का संलयन, ऐसे नाभिकों का उस केन्द्रीय भागों तक गमन आदि कर्मों में भी विभिन्न प्राणादि रश्मियों की भूमिका होती है। इसके लिए मेरा ग्रन्थ **"वेदविज्ञान-आलोक"** पठनीय है।

यह केवल आधिदैविक (वैज्ञानिक) अर्थ है, वह भी संक्षेप में। इसके अभी आध्यात्मिक और आधिभौतिक (लौकिक व्यावहारिक) अर्थ और भी हो सकते हैं, हम विस्तारभय से इन दोनों प्रकार के अर्थों को यहाँ छोड़ रहे हैं। वस्तुतः वेदार्थ करना प्रत्येक विद्वान् का कार्य नहीं है, भले ही वह संस्कृत व्याकरण का भी गंभीर विद्वान् हो। फिर आप तो संस्कृत भाषा से नितान्त अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। इधर उधर से नकल करके वेद व ब्राह्मण ग्रंथों पर आक्षेप कर रहे हैं। आप जिनके अनुवाद वा भाष्य को उद्धृत कर रहे हैं, वे

भी वेदार्थ की वर्णमाला नहीं जानते, तब आपकी कथा ही क्या कहें? इसके लिए आपको मेरा महत्वपूर्ण ग्रंथ ''वेदविज्ञान-आलोक'' पढ़ने का प्रयास करना चाहिए परंतु उसे समझने के लिए आपके संस्कृत व्याकरण के साथ-साथ सैद्धांतिक भौतिक विज्ञान में न्यूनतम M.Sc. की योग्यता अर्जित करनी आवश्यक है।

दूसरे मंत्र का देवता भी इन्द्र है, जिसका अर्थ भी राजा व आत्मा है। इसका भी वैज्ञानिक अर्थ मेरी शैली से किया जा सकता है। अथर्ववेद के संदर्भों के विषय में प्रथम निवेदन तो यह है कि नकल करके लिखा गया लेख उपहास का पात्र ही बनाता है। आपने अथर्ववेद देखा ही नहीं है अन्यथा उपर्युक्त पतों पर इस प्रकार के अर्थ की प्रतीति वाले मंत्र हैं ही नहीं। प्रथम मंत्र का पता (7.6.37) होना चाहिये, जो (7.637) कर दिया है। इसे मुद्रण दोष भी मान लें परन्तु अथर्ववेद काण्ड 7, सूक्त 6 में कुल 4 ही मंत्र हैं, तब आपके द्वारा उद्धृत 37, 40-42 मंत्र कहां से आ गये? आपका इस प्रकार का लेखन आपत्तिजनक व मिथ्या है। पहिले किसी ग्रन्थ को देखना चाहिये, तदुपरान्त ही उस पर लेखनी चलानी चाहिये। कहीं से नकल करके लिखना चोरी भी है और चोरी किया लेख, यदि मिथ्या हो, तब क्या कहना? यही दशा आपकी है। संसार में कोई भी इन मंत्रों को नहीं दिखला सकता है। मैं सोचता हूं कि मेरे इस आक्षेप को पढ़कर आप और नवीन चोरी का प्रयास करेंगे अथवा कहीं से अथर्ववेद लाकर ढूंढ़ने का यत्न करेंगे। मैं आपका परिश्रम बचा दूं और यह बता दूं कि आपको ऐसे मिथ्या अर्थों की प्रतीति कहां हो सकती है? इस प्रकार की भ्रांति आपको निम्न स्थल पर हो सकती है-

''एतद वा उ स्वादीयो यदाधिगवं क्षीरं वा मांसंवा तदेव नाश्नीयात्।''
(अथर्ववेद 9.5.9)

इस मंत्र का अर्थ श्री क्षेमकरणदासजी त्रिवेदी ने 'अधिगवम्' का अर्थ अधिकृत जल तथा 'मांस' का अर्थ मननसाधक बुद्धिवर्धक वस्तु किया है। यदि आप कहें कि यह मंत्र की खींचतान है, तो सीधा अर्थ गोमांस ही बनता है। महाशय! यदि वैदिक शब्दों के सीधे

अर्थ करने लग गये, तो बहुत कठिनाई हो जायेगी, जिससे उबरना आपके वश की बात नहीं। वेद में तो चार सींग, तीन पैर, दो सिर, सात हाथ वाले वृषभ का भी वर्णन है। क्या वृषभ का यहाँ सीधा अर्थ बैल कर सकेंगे? मैं मानता हूँ कि आप ऐसा करने की हास्यास्पद स्थिति में नहीं फंसना चाहेंगे। इसीलिये मेरा निवेदन है कि सावधान होकर अर्थों पर विचार करना चाहिये। नकल करने में भी अक्ल की आवश्यकता होती है। 'गो' शब्द के कितने अर्थ होते हैं, यह वेद में न सही, लोक में ही देख लीजिये। आप्टे शब्दकोष में भी जल अर्थ भी दिया है, तब श्री त्रिवेदी का अर्थ वैदिक तो क्या लौकिक दृष्टि से भी अनुकूल है।

अब इस पर मैं अपने भाष्य को प्रस्तुत करता हूँ, जिसको समझने का सामर्थ्य भी फारुख खां जी! आपमें नहीं होगा और कोई भी मांसाहारी इसे पूर्णतः समझ ले, यह भी संदिग्ध है। देखें मेरा भाष्य–

इस पर मेरा मत

इसके भाष्य में आर्य विद्वान् प्रो. विश्वनाथ विद्यालंकार ने यहा 'मांस' का अर्थ पनीर किया है, तो पं. क्षेमकरणदास त्रिवेदी ने मननसाधक (बुद्धिवर्धक) पदार्थ को मांस कहा है। सभी ने इस मंत्र तथा सूक्त के अन्य मंत्रों का विषय अतिथि सत्कार बताया है। इस मंत्र का देवता पं. क्षेमकरणदास त्रिवेदी की दृष्टि में अतिथि व अतिथिपति है, जबकि पं. सातवलेकर ने अतिथि विद्या माना है। पं. सातवलेकर ने इसका ऋषि ब्रह्मा माना है। छन्द पिपीलिका मध्या गायत्री है। **{ब्रह्मा = मनो वै यज्ञस्य ब्रह्मा (श.१४.६.१.७), प्रजापतिर्वै ब्रह्मा (गो.उ.५.८)। अतिथिः = यो वै भवति यः श्रेष्ठतामश्नुते स वा अतिथिर्भवति (ऐ.आ.१.१.१)। अतिथिपतिः = अतिथिपतिर्वावातिथेरीशे (क.४६.४ – ब्रा.उ.को. से उद्धृत)। पिपीलिका = पिपीलिका पेलतेर्गतिकर्मणः (दै.३.६)। स्वादु = प्रजा स्वादु (ऐ.आ.१.३.४), प्रजा वै स्वादुः (जै.ब्रा.२.१४४), मिथुनं वै स्वादु (ऐ.आ.१.३.४)। क्षीरम् = यदत्यक्षरत् तत् क्षीरस्य क्षीरत्वम् (जै.ब्रा.२.२२८)। मांसम् = मांसं वै पुरीषम् (श.८.६.२.१४), मांसं**

माननं वा मानसं वा मनोऽस्मिन् सीदतीति वा (नि.४.३), मांसं सादनम् (श.८.१.४.५)}

मेरा आधिदैविक भाष्य

(एतत् वा स्वादीयः) ये अतिथि अर्थात् सतत गन्त्री प्राण, व्यान रश्मियां एवं अतिथिपति अर्थात् प्राणापान रश्मियों की नियन्त्रक सूत्रात्मा वायु रश्मियां स्वादुयुक्त होती हैं अर्थात् ये विभिन्न छन्दादि रश्मियों के मिथुन बनाकर नाना पदार्थों को उत्पन्न करने में सहायक होती हैं। (यत्) जो प्राणव्यान व सूत्रात्मा वायु रश्मियां (अधिगवं क्षीरं वा मांसं वा) गो अर्थात् **'ओम्'** छन्द रश्मि रूपी सूक्ष्मतम वाक् तत्व में आश्रित होती हैं, साथ ही अपने पुरीष= पूर्ण संयोज्य बल **{पुरीषम्= पूर्णं बलम् (म.द.य.भा.१२.४६), ऐन्द्रं हि पुरीषम् (श. ८.७.३.७), अन्नं पुरीषम् (श.८.१.४.५)}** के साथ निरन्तर नाना रश्मि वा परमाणु आदि पदार्थों के ऊपर झरती रहती हैं। इन **'ओम्'** रश्मियों का झरना ही क्षीरत्व तथा पूर्ण संयोज्यता ही मांसत्व कहलाता है। यहाँ **'मांस'** शब्द यह संकेत देता है, कि ये **'ओम्'** रश्मियां मनस्तत्व से सर्वाधिक रूप से निकटता से सम्बद्ध होती हैं किंवा मनस्तत्व इनमें सर्वाधिक मात्रा में बसा हुआ रहता है। ये **'ओम्'** रश्मियां प्राणव्यान एवं सूत्रात्मा वायु रश्मियों के ऊपर झरती हुई अन्य स्थूल पदार्थों पर गिरती रहती हैं। (तत् एव न अश्नीयात्) इस कारण से विभिन्न रश्मि वा परमाणु आदि पदार्थों के मिथुन बनने की प्रक्रिया नष्ट नहीं होती। यह प्रक्रिया अतिथिरूप प्राणव्यान के मिथुन बनने किंवा इनके द्वारा विभिन्न मरुदादि रश्मियों को आकृष्ट करने की प्रक्रिया शान्त होने से पूर्व नष्ट नहीं होती है, बल्कि उसके पश्चात् अर्थात् दो कणों के संयुक्त होने के पश्चात् और मिथुन बनने की प्रक्रिया नष्ट वा बन्द हो सकती है, यह जानना चाहिए।

इस ऋचा का सृष्टि पर प्रभाव–

आर्ष व दैवत प्रभाव– इसका ऋषि ब्रह्मा होने से संकेत मिलता है कि इसकी उत्पत्ति मन एवं **'ओम्'** रश्मियों के मिथुन से ही होती

है। यह मिथुन इस छन्द रश्मि को निरन्तर व निकटता से प्रेरित करता रहता है। इसके दैवत प्रभाव से प्राण, व्यान तथा सूत्रात्मा वायु रश्मियां विशेष सक्रिय होकर नाना संयोग कर्मों को समृद्ध करती हैं।

छान्दस प्रभाव– इसका छन्द **पिपीलिका मध्या गायत्री** होने से यह छन्द रश्मि विभिन्न पदार्थों के संयोग के समय उनके मध्य तीव्र तेज व बल के साथ सतत संचरित होती है। इससे उन पदार्थों के मध्य विभिन्न पदार्थ तेज एवं बल को प्राप्त होते रहते हैं।

ऋचा का प्रभाव– जब दो कणों का संयोग होता है, तब उनके मध्य प्राण, व्यान व सूत्रात्मा वायु रश्मियों का विशेष योगदान होता है। ये रश्मियां विभिन्न मरुद् रश्मियों द्वारा आकुंचित आकाश तत्व को व्याप्त कर लेती हैं। इसी समय इन रश्मियों के ऊपर सूक्ष्म **'ओम्'** रश्मियां अपना सेचन करके इन्हें अधिक बल से युक्त करती हैं। इससे दोनों कणों के मध्य फील्ड निरन्तर प्रभावी होता हुआ उन दोनों कणों को परस्पर संयुक्त कर देता है।

मेरा आधिभौतिक भाष्य

(एतत् वा स्वादीयः) ये जो स्वादिष्ट भोज्य पदार्थ होते हैं। (यदधिगवं क्षीरं वा) जो गाय से प्राप्त होने वाले दूध, घृत, मक्खन, दही आदि पदार्थ हैं अथवा (मांसम् वा) मनन, चिन्तन आदि कार्यों में उपयोगी फल, मेवे आदि पदार्थ। ✶ (तदेव न अश्नीयात्) उन पदार्थों को अतिथि के खिलाने से पूर्व न खावे अर्थात् अतिथि को खिलाने के पश्चात् ही खाना चाहिए। यहाँ अतिथि से पूर्व न खाने का प्रसंग इसके पूर्व मंत्र से सिद्ध होता है, जहाँ लिखा है– **"अशितावत्यतिथावश्नीयात्" = अशितावति अतिथौ अश्नीयात्।** इस प्रकरण को पूर्व आधिदैविक भाष्य में भी समझें।

✶ **{'मांसम्' पद की विवेचनाः–** इस विषय में सर्वप्रथम आर्य विद्वान् पं. रघुनन्दन शर्मा कृत ''वैदिक सम्पत्ति'' नामक ग्रन्थ से आयुर्वेद के कुछ ग्रन्थों को उद्धृत करते हुए कहते हैं–

सुश्रुत में आम के फल का वर्णन करते हुए लिखा है कि–

अपक्वे चूतफले स्नाय्वस्थिमज्जानः सूक्ष्मत्वान्नोपलभ्यन्ते पक्वे त्वाऽविर्भूता उपलभ्यन्ते।

अर्थात् आम के कच्चे फल में नसें, हड्डियाँ और मज्जा आदि प्रतीत नहीं होती, किन्तु पकने पर सब आविर्भूत हो जाती हैं।

यहाँ गुठली के तन्तु रोम, गुठली हड्डियाँ, रेशे नसें और चिकना भाग मज्जा कहा गया है। इसी प्रकार का वर्णन भावप्रकाश में भी आया है। वहाँ लिखा है कि–

आम्रास्यानुफले भवन्ति युगपन्मांसास्थिमज्जादयो लक्ष्यन्ते न पृथक् पृथक् तनुतया पुष्टास्त एव स्फुटाः।

एवं गर्भसमुद्भवे त्ववयवाः सर्वे भवन्त्येकदा लक्ष्याः सूक्ष्मतया न ते प्रकटतामायान्ति वृद्धिङ्गताः।

अर्थात् जिस प्रकार कच्चे आम के फल में मांस, अस्थि और मज्जादि पृथक्–पृथक् नहीं दिखलाई पड़ते, किन्तु पकने पर ही ज्ञात होते हैं उसी प्रकार गर्भ के आरम्भ में मनुष्य के अंग भी ज्ञात नहीं होते, किन्तु जब उनकी वृद्धि होती है, तब स्पष्ट हो जाते हैं।

इन दोनों प्रमाणों से प्रकट हो रहा है कि फलों में भी मांस, अस्थि, नाड़ी और मज्जा आदि उसी प्रकार कहे गये हैं, जिस प्रकार प्राणियों के शरीर में। वैद्यक के एक ग्रन्थ में लिखा है कि–

प्रस्थं कुमारिकामांसम्।

अर्थात् एक सेर कुमारिका का मांस। यहाँ घीकुवार को कुमारिका और उसके गूदे को मांस कहा गया है।

कहने का तात्पर्य यह कि जिस प्रकार औषधियों और पशुओं के नाम एक ही शब्द से रखे गये हैं उसी प्रकार औषधियों और पशुओं के शरीरावयव भी एक ही शब्द से कहे गये हैं। इस प्रकार का वर्णन आयुर्वेद के ग्रन्थों में भरा पड़ा है। श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई में छपे हुए 'औषधिकोष' में नीचे लिखे

समस्त पशुसंज्ञक नाम और अवयव वनस्पतियों के लिए भी आये हुए दिखलाये गये हैं। हम नमूने के लिए कुछ शब्द उद्धृत करते हैं-

वृषभ-ऋषभकन्द	सिंही-कटेली, वासा	हस्ति-हस्तिकन्द
श्वान-कुत्ताघास, ग्रन्थिपर्ण	खर-खरपर्णिनी	वपा-झिल्ली= बक्कल के भीतर का जाला
मार्जार-बिल्लीघास, चित्ता	काक-काकमाची	अस्थि-गुठली
मयूर-मयूरशिखा	वाराह-वाराहीकन्द	मांस- गूदा, जटामासी
बीछू-बीछूबूटी	महिष-महिषाक्ष, गुग्गुल	चर्म-बक्कल
सर्प-सर्पिणीबूटी	श्येन-श्येनघंटी (दन्ती)	स्नायु-रेशा
अश्व-अश्वगन्धा, अजमोदा	मेष-जीवशाक	नख-नखबूटी
नकुल-नाकुलीबूटी	कुक्कुट (टी) शाल्मलीवृक्ष	मेद-मेदा
हंस-हंसपदी	नर-सौगन्धिक तृण	लोम(शा)-जटामासी
मत्स्य-मत्स्याक्षी	मातुल- घमरा	हृद-दारचीनी
मूषक-मूषाकर्णी	मृग-सहदेवी, इन्द्रायण, जटामासी, कपूर	पेशी-जटामासी
गो-गौलोमी	पशु-अम्बाड़ा, मोथा	रुधिर-केसर
महाज-बड़ी अजवायन	कुमारी-घीकुमार	आलम्भन-स्पर्श

इस सूची में समस्त पशु पक्षियों और उनके अवयवों के नाम तथा समस्त वनस्पतियों और उनके अवयवों के नाम एक ही शब्द से सूचित किये गये हैं। ऐसी दशा में किसी शब्द से पशु और उसका अवयव ही ग्रहण नहीं किया जा सकता।

विज्ञ पाठक यहाँ विचारें कि ऐसी स्थिति में यहाँ **'मांसम्'** पद से गौ आदि पशुओं वा पक्षियों का मांस ग्रहण करना क्या मूर्खता नहीं है? यहाँ कोई पाश्चात्य शिक्षा से अभिभूत तथा वैदिक वा भारतीय संस्कृति व इतिहास का उपहासकर्ता कथित प्रबुद्ध किंवा मांसाहार का पोषक संस्कृत भाषा के ऐसे नामों

पर व्यंग्य न करें, इस कारण हम उन्हें अंग्रेजी भाषा के भी कुछ उदाहरण देते हैं–

1. Lady Finger भिण्डी को कहते हैं। यदि भोजन विषय में कोई इसका अर्थ किसी महिला की अंगुली करे, तब क्या उसका अपराध नहीं होगा?
2. Vegetable किसी भी शाक वा वनस्पति को कहते हैं। उधर Chamber Dictionary में इसका अर्थ Dull understanding person भी दिया है। यदि vegetable खाते हुए किसी व्यक्ति को देखकर कोई उसे मन्दबुद्धि मनुष्य को खाद्य पदार्थ कहे, तब क्या यह मूर्खता नहीं होगी।
3. आयुर्वेद में एक पौधा है, गोविष, जिसे हिन्दी में काकमारी तथा अंग्रेजी में Fish Berry कहा जाता है। यदि कोई इसका अर्थ मछली का रस लगाये, तो उसे क्या कहा जाए?
4. Potato आलू को कहते हैं, उधर इसका अर्थ A mentally handicapped person भी होता है, तब क्या आलू खाने वाले को मानसिक रोगी मनुष्य को खाने वाला माना जाये?
5. Hag यह एक प्रकार का फल है, उधर An ugly old woman को भी hag कहा जाता है, तब क्या यहाँ भी कोई Hag फल का अर्थ उलटा ही लगाने का प्रयास करेगा?

अब हम इस पर विचार करते हैं कि फलों के गूदे को मांस क्यों कहा? जैसा कि अपने आधिदैविक भाष्य में लिख चुके हैं कि पूर्णबलयुक्त वा पूर्णबलप्रद पदार्थ को मांस कहा जाता है। संसार में सभी मनुष्य फलों के गूदे का ही प्रयोग करते हैं, अन्य भागों का नहीं, क्योंकि फल का सार भाग वही है। वही भाग बल-वीर्य का भण्डार है अर्थात् उसके भक्षण से बल-वीर्य-बुद्धि आदि की वृद्धि होती है। अब कोई प्रश्न करे कि प्राणियों के शरीर का मांस क्यों मांस कहलाया? इसका उत्तर यह है कि किसी भी प्राणी के शरीर का बल उसकी मांसपेशियों के अन्तर्गत ही निहित है, इस कारण से यह भी मांस कहलाया जाता है। जैसे शाकाहारी प्राणी फलों के गूदे का ही विशेष भक्षण करते हैं, वैसे ही सिंहादि मांसाहारी प्राणी, प्राणी के मांस भाग को ही विशेष रूप से खाते हैं। यह दोनों में समानता है। जो स्थान फलों में गूदे का है, वही स्थान प्राणियों के शरीर में मांस का है। **मनुष्य प्राकृतिक रूप से केवल शाकाहारी व दुग्धाहारी प्राणी है, इस कारण वेदादि शास्त्रों में प्राणियों के मांस खाने की चर्चा वेदादि शास्त्रों की परम्परा से सर्वथा अनभिज्ञता का परिचायक है। ऐसी चर्चा करने वाले कथित वेदज्ञ, चाहे विदेशी हों वा स्वदेशी, हमारी**

दृष्टि में वे वेदादि शास्त्रों की वर्णमाला भी नहीं जानते, भले वे व्याकरणादि शास्त्रों के कितने ही बड़े अध्येता-अध्यापक क्यों न हों।

प्रश्न- वेद में **'मांसम्'** पद का अर्थ प्राणियों का मांस कदापि नहीं हो सकता, इसे आपका पूर्वाग्रह क्यों न माना जाये; जो केवल शाकाहार के आग्रहवश ही किया गया है?

उत्तर- जिस परम्परा में सामान्य योगसाधक के लिए अहिंसा को प्रथम सोपान कहा गया हो, जहाँ मन, वचन, कर्म से कहीं भी व कभी भी सभी प्राणियों के प्रति वैर त्याग अर्थात् प्रीति का संदेश दिया गया हो, वहाँ सिद्धपुरुष योगियों एवं उसी क्रम में अपनी योगसाधना द्वारा ईश्वर व मंत्रों के साक्षात्कृतधर्मा महर्षियों, उनके ग्रन्थों एवं वेदरूप ईश्वरीय ग्रन्थों से हिंसा का संदेश देना मूर्खता व दुष्टता नहीं है, तो क्या है? जो विद्वान् वैदिक अहिंसा का स्वरूप देखना चाहें, वे **पातंजल योगदर्शन** के **व्यासर्षि भाष्य** को स्वयं पढ़ कर देखें। इस ऐतरेय ब्राह्मण में जहाँ प्रायः सभी भाष्यकारों ने पशुओं का नृशंस वध एवं उसके अंगों के भक्षण का विधान किया है, वहाँ हमने उसका कैसा गूढ़ विज्ञान प्रकाशित किया है, यह पाठक इस ग्रन्थ के सम्पूर्ण अध्ययन से जान सकते हैं।

मेरा आध्यात्मिक भाष्य

{मांसम् = मन्यते ज्ञायतेऽनेन तत् मांसम् (उ.को.३.६४), मांसं पुरीषम् (श.८.७.४.१६), (पुरीषम् = पुरीषं पृणातेः पूरयतेर्वा - नि. २.२२; सर्वत्राऽभिव्याप्तम् - म.द.य.भा.३८.२१; यत् पुरीषं स इन्द्रः - श.१०.४.१.७; स एष प्राण एव यत् पुरीषम् - श.८.७.३.६)}

(एतत् वा उ स्वादीयः) योगी पुरुष के समक्ष परमानन्द का आस्वादन कराने वाले ये पदार्थ विद्यमान रहते हैं, जिनके कारण जीव का परमात्मा के साथ सायुज्य रहता है, (यदधिगवं क्षीरं वा मांसं वा) वे पदार्थ योगी की मन आदि इन्द्रियों में प्रतिष्ठित होते हैं। वे पदार्थ क्या हैं, इसका उत्तर यह है कि सर्वत्र अभिव्याप्त परमैश्वर्य सम्पन्न इन्द्ररूप परमात्मा से झरने वाली **'ओम्'** वा गायत्री आदि वेदों की ऋचाएं ही वे पदार्थ हैं, जो योगी की इन्द्रियों व अन्तःकरण में निरन्तर स्रवित होती रहती हैं। योगी उन आनन्दमयी

ऋचाओं का रसास्वादन करने लगता है, तब वह परमानन्द का अनुभव करने लगता है। (तदेव न अश्नीयात्) योगी उन ऋचाओं के आनन्द को उस समय तक अनुभव नहीं कर पाता, जब तक कि अतिथिरूप प्राण तत्व, जो योगी के मस्तिष्क व शरीर में सतत संचरित होते हैं, उन ऋचाओं के साथ संगत नहीं होते हैं। यहाँ अतिथि से पूर्व का प्रकरण पूर्ववत् समझें।

भावार्थ– जब कोई योगी योगसाधना करता है और एतदर्थ प्रणव वा गायत्री आदि का यथाविध जप करता है, तब सर्वत्र अभिव्याप्त परमैश्वर्यवान् इन्द्ररूप ईश्वर से निरन्तर प्रवाहित **'ओम्'** रश्मियां उस योगी के अन्तःकरण तथा प्राणों के अन्दर स्रवित होती रहती है। इससे वह योगी उन रश्मियों का रसास्वादन करता हुआ आनन्द में निमग्न हो जाता है।

(**वेदविज्ञान–आलोकः** पूर्वपीठिका से उद्धृत)

हम यहाँ वेद के ही दो वचनों को उद्धृत करते हैं–

आश्वाः कणाः गावस्तण्डुलाः। (अथर्ववेद 11.3.5)

श्याममयोऽस्य मांसानि लोहितमस्य लोहितम्।। (अथर्ववेद 11.3.7)

इसका सीधा अनुवाद होगा कि कण ही अश्व है और गौ चावल हैं। चावलों का श्याम भाग ही मांस है, लाल अंश है, वही रुधिर है। अब फारुख जी! कहिए, ऐसे अश्व व गौ के भक्षण का हम विरोध कहाँ करेंगे? वस्तुतः इनका वह अर्थ नहीं, जो यहाँ अनुवाद में दर्शाया है,बल्कि इसका भी तीन प्रकार का गम्भीर अर्थ किया जा सकता है, जैसा कि हमने पूर्व मंत्र में दर्शाया है। विस्तारभय से मैं यहाँ नहीं कर रहा हूँ।

अब आपकी समझ में आ जाना चाहिये कि वेद में रूढ़ अर्थ नहीं होता बल्कि शब्दों का यथाप्रसंग यौगिक व योगरूढ़ अर्थ

होता है। देखिये, जिस अथर्ववेद में आप गोमांस खाने व परोसने की बात कर रहे हैं, वह अथर्ववेद कहता है-

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पुरूषम्।
तं त्वां सीसेन विध्यामो (1.16.4)

अर्थात् तू यदि हमारी गाय, घोड़ा वा मनुष्य को मारेगा, तो हम तुझे सीसे से बेध देंगे।

मा नो हिंसिष्ट द्विपदो मा चतुष्पदः। (11.2.1) अर्थात् हमारे मनुष्यों और पशुओं को नष्ट मत कर, अब अन्यत्र वेद में देखें-

इमं मा हिंसीर्द्विपाद पशुम्। (यजुर्वेद 13.47) अर्थात् इस दो खुर वाले पशु की हिंसा मत करो।

इमं मा हिंसीरेकशफं पशुम्। (यजुर्वेद 13.48) अर्थात् इस एक खुर वाले पशु की हिंसा मत करो।

यजमानस्य पशुन् पाहि। (यजु. 1.1) अर्थात् यजमान के पशुओं की रक्षा कर।

आप कहेंगे यह बात यजमान वा किसी मनुष्य विशेष के पालतू पशुओं की हो रही है न कि हर प्राणी की।

इस भ्रम के निवारणार्थ अन्य प्रमाण-

'मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।' (यजु. 36.18) अर्थात् मैं सब प्राणियों को मित्र की भाँति देखता हूँ।

'मा हिँ्सी स्तन्वा प्रजाः ।' (यजु. 12.32) अर्थात् इस शरीर से प्राणियों को मत मार।

'मा स्त्रेधत' (ऋ. 7.32.9) अर्थात् हिंसा मत करो।

बन्धुवर! क्या आप भी वेद में हिंसा का प्रमाण देंगे? आप छल करने में बड़े निपुण हैं, यह बात स्थान-स्थान पर प्रतीत होती

है। आपने **'अघ्न्या'** शब्द पर टिप्पणी करते हुये लिखा है कि यह किसी गाय विशेष के लिये है, न कि समस्त गौ जाति के लिये। इसके लिये ऋग्वेद के एक मंत्रार्थ को उद्धृत कर दिया है, छलने में महारथ का प्रमाण। **'अघ्न्या'** शब्द है यजुर्वेद के (1.1) मंत्र में, इसको जोड़ रहे हैं ऋग्वेद के एक से। है न कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा - जिस ऋक् मंत्रार्थ का पता (1.146.27) दिया है। मेरी चुनौती है कि संसार के किसी ग्रंथालय में इस पते का मंत्र दिखलाइये। आपको ज्ञात होना चाहिए कि (ऋ. 1.146) में कुल 5 ही मंत्र है, तब 27वाँ कहाँ से आ गया? तब यह भी नकल का तीर व्यर्थ गया। आपने (ऋग्वेद 10.85) के 93वें मंत्र से बारात को मांस परोसने का विवरण लिखा है। यहाँ भी नकल की चूक। इस सूक्त में कुल 48 ही मंत्र हैं, तब 93वां मंत्र कहां से ले आये? इन 48 मंत्रों में भी कहीं मांस परोसने की चर्चा नहीं है। हाँ, गो भक्षकों को तथा ऐसे अनर्थ करने वालों को करारी चपत अवश्य लगाई है। जहाँ 'ऋक्' और 'साम' रूपी वेद की ऋचाओं को **गौ** कहा है, तब खाइये इन गौओं को, कल्याण हो जायेगा, जीवन धन्य हो जायेगा। जब ऋग्वेद व सामवेद की पवित्र ऋचाओं का पान करेंगे, तब तो गोमांस परोसना सदा के लिए भूल जायेंगे। आप जो (ऋग्वेद 10.85.13) की बात कर रहे हैं, उसका देवता सूर्य विवाह है अर्थात् अलंकारिक रूप से ऊषा का विवाह, जिसमें **'गावः'** का अर्थ सूर्य की किरणें हैं, न कि गाय। ऊषा काल व सूर्य से गाय का क्या सम्बन्ध? ये किरणें माघ मास में मर जाती अर्थात् मंद पड़ जाती हैं, यह तात्पर्य है। यदि इसे वधू अर्थ में मानें, तो **'हन्'** धातु का अर्थ मारना नहीं, बल्कि प्राप्त करना होगा। दुःख इस बात का है कि मांसभोजी क्रूरता पसन्द लोग **'हन्'** का अर्थ मारना ही लेते हैं, जबकि यह धातु 'प्राप्त करने' अर्थ में भी प्रयुक्त होती है। यदि आप हन् का अर्थ मारना ही सर्वत्र करेंगे, तब-

यथाङ्गा वर्धता शेपस्तेन योषितामिज्जहि। (अथर्व 6.101.1)

का अर्थ यह करेंगे कि हे पति! तू वीर्य सम्पन्न होकर अपनी पत्नी को मार डाल, तब निश्चित ही यह मूर्खता का प्रमाण

होगा। तब 'जहि' का अर्थ 'जा' ऐसा ही करना पड़ेगा अर्थात् पत्नी के पास जा। यह अर्थ सुसंगत होगा। प्रायः विद्वान् 'गोघ्न' शब्द को पाणिनि अष्टक के प्रमाण से सम्प्रदान में प्रयोग करके, जिस अतिथि के लिये गाय मारी जाये, उसे गोघ्न बताते हैं। यहाँ भी उन्हें हन् का अर्थ मारना ही समझ में आता है। क्या करें, बेचारे जीभ व मजहब दोनों के दास हैं। मैं पूछता हूं कि गोघ्न शब्द से मिलता जुलता शब्द हस्तघ्न भी है, जो हाथ के दस्ताने (Gloves) के लिये प्रयुक्त होता है, तब हस्तघ्न का अर्थ मिथ्या हुआ। तब यहाँ हन् का अर्थ प्राप्त करना ही लेना होगा। इसलिये वेद के अर्थ प्रकरणानुकूल तथा वेद की मूल भावना को ध्यान में रखकर ही लिये जाने योग्य हैं, न कि अपनी-अपनी रुचि व मति के अनुसार। वेद में 'गोघ्न' शब्द गोघाती के लिये ही आता है, वहाँ उस गोघ्न से दूर रहने का ही उपदेश है, न कि उसे अतिथि बताया है। (ऋग्वेद 1.114.10) में आता है-

आरे ते गोघ्नमुत पुरूषघ्नम्। अर्थात् गोघाती और नरघाती तुमसे दूर रहें।

हम आर्यजन वेद को ही स्वतः एवं परम प्रमाण मानते हैं, अन्य ग्रन्थों में ब्राह्मण ग्रन्थ, मनुस्मृति, दर्शनशास्त्र, उपनिषद्, रामायण, महाभारत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व सत्यार्थ प्रकाश आदि को परतः प्रमाण। हम वेद में हिंसा के आपके आरोपों का उत्तर दे चुके, अब अन्य प्रमाण हमें मान्य नहीं। हमारी दृढ़ मान्यता है कि वेद संहिताओं के तो भाष्यों में कई भाष्यकारों ने मिथ्या अर्थ किये हैं, जबकि अन्य परतः प्रामाणिक ग्रन्थों में कहीं अनर्थ है, तो कहीं प्रक्षेप। अनर्थ को शुद्ध करने पर भी कहीं-2 मांसाहार समर्थक प्रकरण रह जाते हैं, वे वेद विरुद्ध होने से अमान्य हैं, उन्हें हटाने का साहसिक कार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं उनके अनुयायी आर्य विद्वानों ने किया है व कर भी रहे हैं। 18 प्रचलित पुराणों को हम अप्रमाण मानते हैं, जिनकी वकालत करना हमें न तो स्वीकार्य है और न आवश्यक। ये ग्रन्थ मध्यकालीन पण्डितों की रचनायें हैं। ऐसा भी स्पष्ट है कि **कोई भी पुराण एक ही व्यक्ति**

की रचना नहीं है। समय-समय पर जोड़-तोड़ चलती रही है तथा चतुराई पूर्वक इन्हें भगवान् वेदव्यासजी द्वारा रचित सिद्ध करने का प्रयास किया गया है व किया जा रहा है। इन कुग्रन्थों (यद्यपि इनमें बहुत सी बातें अति उपयोगी व सत्य भी हैं) को प्रमाण मानकर छाती से चिपकाये रखना, हिन्दुओं का दुर्भाग्य है। अब जरा ब्राह्मण ग्रन्थ में मांसादि स्वरूप पर दृष्टि डालें-

'यदा पिष्टान्यथ लोमानि भवन्ति। यदाप आनयति अथ त्वग्भवति। यदा स यौत्यथमांसं भवति।' (वैदिक सम्पत्ति से उद्धृत पृ. 527) अर्थात् आटे की लोम संज्ञा है, पानी मिले आटे की चर्म तथा गूंथा हुआ आटा ही मांस संज्ञक है।

अब आप ही सोचिये कि ऐसे मांस भक्षण का हम भी विरोध कहाँ कर सकते हैं? इसी प्रकार का विवरण ऐतरेय ब्राह्मण में भी मिलता है।

तस्य यानि किंशारूणि तानि रोमाणि, ये तुषाः सा त्वग्ये फलीकरणास्तदसृग्यत्पिष्टं किक्नसास्तन्मांसं यत्किंचित्कं सारं तदस्थि।। इत्ति ।

इसका आचार्य सायण ने भाष्य इस प्रकार किया है-

तस्य व्रीहिबीजस्य संबन्धीनि यानि किंशारूणि
बुसपलालादीनि तानि पशुरोमस्थानीयानि ये तुषास्तण्डुलवेष्टनरूपाः
प्रथमावघातेन परित्याज्याः सा तुषसमष्टिः पशुत्वक्स्थानीया, ये
फलीकरणास्तण्डुलश्वैत्यार्थेनावघातेन हेया
अंशास्तत्सर्वमसृक्पशुरक्तस्थानीयम्। यत्पिष्टं तण्डुलपेषणेन निष्पन्नं
पिण्डयोग्यं रूपं ये च किक्नसाः सूक्ष्माः पिष्टावयवास्तत्सर्वं
पशुमांसस्थानीयम्। यत्किंचिकं सारं स्वार्थे कप्रत्ययः
किंचिदन्यद्व्रीहिसंबन्धिकाठिन्यरूपं सारं तदस्थि
तत्पशोरस्थिस्थानीयम्। एवं पशुसाभ्यात् पुरोडाशस्य उस पशुत्वम्।।

डॉ. सुधाकर मालवीय का हिन्दी अनुवाद-

उस व्रीहि का जो (किंशारू अर्थात्) भूसा है वे पशु के लोम स्थानीय हैं। जो तुष (प्रथम अवघात से निकला चावल का वेष्टन रूप भूँसी) है वे पशु के त्वचास्थानीय हैं, जो फलीकरण (तण्डुल को श्वेत करने के लिए जो अवघात से निकला हेयांश) है, वह पशु का रूधिर स्थानीय है। जो पिसा अवयव है और किनकी है वह पशु का मांस स्थानीय है और जो कुछ भी बचा हुआ व्रीहि का कठोर भाग है वह पशु की अस्थि रूप है।

यद्यपि इनका भाष्य प्रमाणिक नहीं है पुनरपि यहाँ इन्होंने भी मांसपरक अर्थ नहीं किया है।

इस पर मेरा भाष्य

{किंशारुः = किं शृणात्यनेनेति किंशारुः (उ.को.१.४)। रोमाणि = लोमानि (म.द.ऋ.भा.१.१३५.६), (लोम = लूयते छिद्यते तत् लोम - उ.को.४.१५२; छन्दांसि वै लोमानि - श.६.४.१.६)। किक्नसाः = सूक्ष्माः (आचार्य सायण भाष्य)। मांसम् = मनोऽस्मिन् सीदतीति वा (नि.४.३), मांसं वै पुरीषम् (श.८.६.२.१४), मांसं सादनम् (श. ८.१.४.५)। रोम = रौति शब्दयतीति रोम (उ.को.४.१५२)}

उस पदार्थ में विद्यमान **{किंशारुः = किं किंचित् कुत्सितं वा शृणातीति (इति मे मतम्)} शक्तिमान् और तेजस्वी विकिरणों में से जो तीव्र भेदकक्षमतासम्पन्न होते हैं, वे ही किंशारु कहलाते हैं।** इसलिए निघण्टुकार ने कहा **"कुत्सः वज्रनाम" - निघं.२.२०।** ऐसे तीव्र विकिरण विविध ध्वनियाँ उत्पन्न करते रहते हैं और ये विकिरण छन्द रश्मियों के रूप में होते हैं। ये रश्मियाँ विभिन्न पदार्थों को तीव्रता से काटती रहती हैं और जो **अप्रकाशित बाधक पदार्थ आकाश तत्त्व में मिलकर तीक्ष्णतारहित हुआ परितृप्त सा हो जाता है, वह सभी प्रकार के कणों की त्वचा के तुल्य हो जाता है अर्थात् वह सभी कणों को आच्छादित किये रहता है। हाँ, इतना अवश्य है कि वह आच्छादित करने वाला अप्रकाशित बाधक पदार्थ उन कणों को आच्छादित करते हुए भी किसी भी संयोग प्रक्रिया में बाधक नहीं बन पाता।** इन सब प्रक्रियाओं में जो तत्त्व छेदन-भेदन व

संयोजन का मूल प्रवर्तक है, वह मन और वाक् का मिथुन इन सभी तत्त्वों की अपेक्षा में असृजित ही कहलाता है। इन तत्त्वों का मिथुन अन्य सृजित तत्त्वों की अपेक्षा पूर्ण होता है और वह पूर्ण तत्त्व इन सभी तत्त्वों के निर्माण और विनाश की प्रक्रियाओं को **सर्वशक्तिमती चेतन सत्ता की मूल प्रेरणा से चलाता रहता है।** इन तत्त्वों में **जो जितने सूक्ष्म तत्त्व होते हैं, वे उतने ही मन और वाक् के मिथुन से संसिक्त होते हैं, जिसके कारण वे उतने ही बलशाली होते हैं।** वे सूक्ष्म पदार्थ ही अपने से स्थूल पदार्थों के आधार और निवास स्थान रूप होते हैं। सभी स्थूल पदार्थों में उन सूक्ष्म पदार्थों का ही बल कार्य करता है और **उन पदार्थों में जो सारभूत तत्त्व होते हैं, वे अस्थि रूप होते हैं।** यहाँ **'सारम्'** शब्द **'सृ गतौ'** धातु से निष्पन्न है। इसका आशय यह है कि वह सूक्ष्म पदार्थ पूर्व पदार्थ से भी अधिक शक्तिशाली होता है, जो सारे पदार्थ को अपने बल से धारण किये रहता है। यह पदार्थ विभिन्न पदार्थों को इधर-उधर प्रक्षिप्त करने में भी समर्थ होता है। हमारे मत में यह पदार्थ मन और वाक् तत्त्व से ही निर्मित होता है।।

अब देखें, वेदादिशास्त्रों में मांसाहार की भ्रान्ति कैसे होती रही है। जिन्हें वेदादिशास्त्रों के विज्ञान की समझ नहीं है, उन्हें 'मांस' शब्द आते ही मानो मांसाहार का प्रमाणपत्र मिल जाता है, जबकि इन स्थलों पर तो रूढ़ार्थ से भी मांसाहार की सिद्धि नहीं होती।

वैसे ऐतरेय ब्राह्मण का मैंने जो वैज्ञानिक भाष्य किया है, यह भाष्य **'वेदविज्ञान-आलोकः'** नामक चार भागों में कुल २८०० पृष्ठ के विशाल ग्रन्थ के रूप में है। इस ग्रन्थ का वैज्ञानिक भाष्य विश्व में प्रथम बार मैंने ही किया है। **यह ग्रन्थ वर्तमान संसार की महान् बौद्धिक सम्पदा का रूप माना जा सकता है।** उससे अप्रत्याशित व गम्भीर वैज्ञानिक तथ्य प्रगट हो रहे हैं। जिन स्थलों पर अब तक आर्य समाजेत्तर भाष्यकारों को हिंसा, मांसाहार दिखाई दे रहा था तथा आर्य विद्वानों को भी सामान्य स्तर की ही बातें दिखाई दी हैं, वहीं मैंने उन्हीं प्रकरणों में ऐस्ट्रोफिजिक्स, कॉस्मोलॉजी, परमाणु, नाभिकीय व कण भौतिकी के अनेक गूढ़ तथा वर्तमान

विज्ञान द्वारा भी अविज्ञात रहस्य खोजे हैं। जिस दिन मेरे वेदविज्ञान-आलोकः ग्रन्थ के विज्ञान का संसार में व्यापक प्रचार होगा, उस दिन सम्पूर्ण विश्व में भौतिक विज्ञान में एक नूतन व अभूतपूर्व क्रान्ति आकर वेदों व ऋषियों की सम्पूर्ण भूतल पर प्रतिष्ठा होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। श्री फारुख साहब जैसे मोटी बुद्धि वाले मांसभोजी क्या जानें, उस दिव्य वैदिक व विज्ञान को? उसे तो वेदभक्त कहाने वाले हिन्दू भी नहीं समझ पा रहा।

आपने महाभारत के कुछ प्रमाण दिये हैं। मैं पुनः निवेदन कर दूं कि वेदेतर लगभग सभी ग्रन्थ प्रक्षेपकर्ता धूर्तों की धूर्तता का शिकार रहे हैं। महाशय जी! महाभारत में लगभग 95 प्रतिशत प्रक्षेप है, तब उसमें हिंसा समर्थक प्रमाण मिल जायें, तब क्या आश्चर्य? मैं महाभारत के कुछ प्रमाण दे रहा हूं, उन पर आप विचारें-

यः स्यादहिंसासम्पृक्तः स धर्म इति निश्चय। (शान्तिपर्व अ.109.12)
अर्थात् जो अहिंसा से युक्त हो, वही निश्चय करके धर्म है।

अहिंसा सर्वभूतेस्यो धर्मेभ्यो ज्यायसीनता।। (शान्तिपर्व अ. 265.6)
अर्थात् सम्पूर्ण भूतों के लिये अहिंसा सबसे बड़ी है।

सुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृषरौदनम्।
धूर्तः प्रवर्तित हयेतन्नैतद् वेदेषु कल्पितम्। (शान्तिपर्व अ. 265.9)

अहिंसा सकलो धर्मः। (शा. प. अ. 272.20)

अर्थात् शराब, मांस आदि की यज्ञ में आहुति देना वेद विरुद्ध है तथा यह धूर्तों द्वारा चलायी गयी है। अहिंसा सम्पूर्ण धर्म है।

बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्यमिति वै वैदिकी श्रुतिः।
अज संज्ञानि बीजानि च्छाग नो हन्तुमर्हथ।
नैष धर्मः सतां देवा यत्र वध्येत वै पशुः।। (शा. प. 337.4,5)

अर्थात् यज्ञ बीजों (अन्न आदि) से करना चाहिये, यही वैदिक विधान है। इन बीजों की अज संज्ञा है। छाग (बकरा) मारना

उचित नहीं। जहाँ पशु वध होवे, वह सज्जनों का धर्म नहीं है। महाभारत में अनेकत्र अहिंसा परमोधर्म का घोष है। पितामह भीष्म के उपदेशों में मांसाहार की घोर निन्दा विस्तार से की गई है। इतने पर भी कोई विश्वास न करे, तो महाभारत का अनुशासन पर्व स्वयं ही पढ़ लेवे। पुनरपि कोई वेद व वैदिक आर्यों में मांसाहार के प्रमाण ढूंढे, उसे पागल ही कहा जा सकता है।

हां, हम मानते हैं कि अनेक आर्ष ग्रन्थों में मांसाहारी लोगों ने अपने-अपने दूषित विचारों का समय-समय पर प्रक्षेप किया है, जिसे सावधानी पूर्वक निष्पक्ष दृष्टि से विचार कर विद्वान् लोग दूर कर सकते हैं। **आपका कथन है-**

'स्वामी दयानन्द कहते हैं कि जहाँ गोमेध वगैरह यज्ञ लिखा है, वहाँ पशुओं में नर पशु का मांस लिखा है, क्योंकि हृष्ट पुष्ट बैल वगैरह नर पशु हैं। इस प्रकार की गाय नहीं होती है, उसे भी गोमेध में मारना लिखा है।' (सत्यार्थ प्र. पृ. 303 सन् 1875, दयानन्द भाव चित्रावली पृ.28)

समीक्षा- प्रतीत होता है कि आपने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा, तो क्या देखा तक नहीं। आपने दयानन्द भाव चित्रावली से उदाहरण देखकर ही लिख दिया है। आज सम्पूर्ण आर्य जगत् में से कहीं से भी सत्यार्थ प्रकाश लाकर पढ़ लेना, फिर दोषारोपण करना, तभी उचित रहेगा। हां, हमें यह स्वीकारने में कोई संकोच नहीं कि सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण में मांसाहार एवं श्राद्ध आदि अवैदिक व पापपूर्ण मान्यतायें धूर्त लेखकों ने लिख डाली थीं। ऋषिवर स्वयं न लिखकर, बोलकर लिखवाते थे। अति व्यस्ततावश अपने विश्वस्तों पर कार्यभार छोड़ देने से ऐसी आपत्तिजनक बातें जोड़ दी गईं, जिन्हें स्वयं ऋषि ने अपने जीवन काल में निकाल कर दूसरा संस्करण तैयार किया था। यह संस्करण ऋषि के जीवन काल के पश्चात् ही छप सका था। प्रथम संस्करण राजा जयकृष्णदास की देखरेख में छपा था, जिसमें उपर्युक्त मिथ्या बातें जोड़ दी गयी थीं। साथ ही 13 व 14 सुल्लास भी नहीं छापे थे। इस संस्करण की भूलों के विषय में ऋषि ने विक्रमी संवत् 1935 में विज्ञापन छपवाये

थे। एक बार उनके भक्त डा. मुकन्दसिंह, रईस, छलेसर, अलीगढ़ निवासी ने एक पत्र द्वारा निवेदन किया–

'मैं पार्वण श्राद्ध करना चाहता हूँ, उसके लिये बकरा भी तैयार है। आप ही इस श्राद्ध को कराइये।'

इसके उत्तर में महर्षिजी ने बनारस से लिखा–

'यह संस्करण राजा जयकृष्णदास द्वारा मुद्रित हुआ है। इसमें बहुत सी अशुद्धियां रह गई है। शाके 1796 में मैंने जो पंचमहायज्ञ विधि प्रकाशित कराई थी, जो कि राजाजी के सत्यार्थ प्रकाश से एक वर्ष पूर्व छपी थी, उसमें जबकि मृतक श्राद्ध आदि का खण्डन है, तो फिर सत्यार्थ प्रकाश में मण्डन कैसे हो सकता है? अतः श्राद्ध विषय में, जो मृतक श्राद्ध और मांस विधान का वर्णन है, वह वेद विरुद्ध होने से त्याज्य है।'

जब किसी ग्रन्थ का लेखक स्वयं अपने ग्रन्थ में रह गई भूलों व शरारती तत्वों द्वारा जानबूझकर की गयी मिलावटों को अमान्य व आपत्तिजनक घोषित करे, तब भी कोई व्यक्ति उन्हीं बातों को पकड़कर उदाहरण देना 125 वर्ष पश्चात् भी जारी रखे, तब उसे क्या कहा जाये, यह आप ही विचार कर बताइयेगा। विज्ञ व निष्पक्ष पाठक स्वयं विचार कर ही लेंगे।

फारुखजी! आप जरा अपने मांसाहार समर्थक हठ को त्याग कर प्राणिमात्र के हितैषी मानव वैदिक धर्म के महान् संशोधक भगवान् दयानन्दजी महाराज के हृदय के भावों तथा महान् मेधावी मस्तिष्क को जानने का प्रयत्न करें। जिस सत्यार्थ प्रकाश पर आपने मिथ्या आरोप लगाये हैं, वह ग्रन्थ मांसाहार के विषय में क्या कहता है, जरा देखिये–

'मद्यमांसाहारी म्लेच्छ, जिनका शरीर मद्यमांस के परमाणुओं से ही पूरित है, उनके हाथ का न खावें।'

'इन पशुओं को मारने वाले को सब मनुष्यों की हत्या करने वाले जानियेगा। जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आकर गो

आदि पशुओं को मारने वाले मद्यपायी राज्याधिकारी हुये हैं, तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की सीमा बढ़ती जाती है।' सत्यार्थ प्रकाश - दशम समुल्लास।

देखिये दया के सागर ऋषि दयानन्द क्या कहते हैं-

'पशुओं के गले छुरे से काटकर, जो अपना पेट भरते हैं, वे सब संसार की हानि करते हैं। क्या संसार में उनसे भी अधिक कोई विश्वासघाती, अनुपकारी, दुख देने वाले पापीजन होंगे?'

'हे मांसाहारियो! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं?'

'हे धार्मिक लोगो! आप इन पशुओं की रक्षा तन, मन और धन से क्यों नहीं करते?' (गोकरुणानिधि)

बन्धुवर! वैदिक धर्म कुरान की भाँति केवल सम्प्रदाय वा क्षेत्र विशेष के ही लाभ की बात नहीं करता है, बल्कि प्राणिमात्र के कल्याण की ही कामना करता है। द्युलोक, पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष, जल, वायु, वनस्पति, सभी प्राणी आदि के लिये शान्ति की प्रार्थना करता है। संसार का कोई मत मजहब इस व्यापकता, सार्वकालिकता की बात नहीं करता, अपितु कूपमण्डूक बना स्वार्थ की ही बात करता है। हमारे यहाँ बलिवैश्वदेव नाम से एक महायज्ञ सनातन से प्रचलित है, जिसमें कीट, पक्षी, पशु, भूखे रोगी, असहाय मनुष्य, कुत्ते, कौवे, गाय आदि के लिये प्रतिदिन भोजन देने का विधान है और ऐसा करने वाली आर्य जाति भला कैसे अपनी रसना की रुचि के लिये किसी प्राणी का गला काटने का पाप कर सकती है? हां, इस सर्वकल्याणक धर्म में धूर्त लोगों ने समय-समय पर दूषित बातें मिला दी है, उन्हें दूर करने का प्रयत्न सर्वप्रथम ऋषि दयानन्द सरस्वतीजी ने किया था और उन्हीं की कृपा से आर्य समाज इस पुनीत कार्य को कर रहा है। वैदिक धर्म कहता है कि सभी प्राणियों में हमारी भाँति जीवात्मा का निवास होता है। सबको हमारी ही भाँति दुःख सुख होता है। सभी प्राणी परमात्मा की सन्तान होने से भाई-भाई हैं। जब हमारे कोई कांटा भी चुभता है, तो उछल पड़ते

हैं। जरा सोचिये! जब आप किसी जानवर को काटते हो, तब उसे कितनी पीड़ा होती होगी? बेचारा विवश होकर तड़पड़ाता-चीत्कार करता प्राण छोड़ता है और उसे पापी जन उदरस्थ कर जाते हैं, जैसे- कुत्ते व गिद्ध मृत जानवर को चट कर जाते हैं। जरा सोचिये कि कौन माता-पिता होंगे, जो अपनी बुद्धिमान् सन्तान को आदेश दे दें कि तुम अपने मूर्ख भाईयों को मारकर खा जाओ और ऐसा कुकर्म देख माता-पिता प्रसन्न होवें? ऐसा कदापि सम्भव नहीं, तब वह सबका माता-पिता परमात्मा भला मांसाहारियों के कुकर्म को देखकर कैसे प्रसन्न हो सकता है? हां, वह उन पापियों को पाप की सजा अवश्य देगा। आशा है आप विचारेंगे कि रहीम अल्लाह उन जानवरों के लिये भी रहीम है, जिन्हें आप मारकर खाते हैं। यदि कहो कि उन्हें यों भी मरना है, तो क्या आप अमर रहेंगे? यदि नहीं तो क्या आप चाहेंगे कि कोई आपको मारकर खा जावे, यदि नहीं तो जानवरों को क्यों मारना? रहीम के भक्त स्वयं रहीम बनें, तभी इबादत सफल होगी।

मांसाहार व आयुर्वेद

यदि कोई यहाँ यह कहे कि आयुर्वेदिक ग्रन्थों (चरक शास्त्र व सुश्रुत संहिता) में विभिन्न रोगों की चिकित्सा में विभिन्न पशु-पक्षियों के मांस खाने का विधान है, तब यह अधर्म कैसे हुआ? इसके उत्तर में मैं दृढ़ता से कहना चाहूँगा कि आयुर्वेद के ग्रन्थों में यह प्रकरण वेदविरुद्ध व प्रक्षिप्त होने से हमें मान्य नहीं है। **भला जिन ऋषियों का योग व दैनिक व्यवहार अहिंसा से प्रारम्भ होता है, जो सबके साथ स्वात्मवत् व्यवहार की शिक्षा देते हैं, वे ही ऋषि अपने स्वास्थ्य के लिए किसी प्राणी के प्राणहरण की बात कैसे कर सकते हैं?** फिर जब स्वास्थ्य का सम्बंध शरीर के साथ-साथ मन व आत्मा से भी होता है, तब मन व आत्मा को दूषित करने वाले मांस आदि अभक्ष्य पदार्थों को कैसे स्वास्थ्यवर्धक कहा जा सकता है? फिर परमेश्वर का विज्ञान भौतिक व आध्यात्मिक दोनों का समग्ररूप है, तब आयुर्वेद कैसे ऐसे अधर्म की आज्ञा दे सकता है?

क्या मांसाहार एक रोग को दूर करके अन्य रोग उत्पन्न नहीं करता है? यदि हाँ, तब कैसे इसे आयुर्वेद का भाग माना जाए? जब मांसाहार व हिंसा से पूर्वोक्त अनेक रोग व प्राकृतिक प्रकोप होते हैं, तब कैसे हमारे महान् आचार्य इसकी अनुमति दे सकते हैं? **वस्तुतः आयुर्वेद के दुर्भाग्य से कुछ कामी व मांसाहारी लोगों ने कामोत्तेजक औषधियों तथा मांसाहार के प्रसंग में बाद में मिलाए हैं, विज्ञजनों को ऐसे प्रकरणों से दूर रहना चाहिए। इसके साथ ही आयुर्वेद के विद्वानों की इन प्रकरणों पर गहराई से विचार करके ऐसे प्रकरणों को ग्रन्थों से निकाल देना चाहिए।**

चलते-2 आपके अन्तिम वाक्यों पर संक्षिप्त संकेत कुछ कर देना आवश्यक समझता हूँ। **आपका कथन है-**

'इस्लाम का सबसे बड़ा गुण है कि उसकी शिक्षा प्रकृति के अनुकूल है। उसका एक भी आदेश ऐसा नहीं, जिसको हम अवैज्ञानिक कह सकें। उसके जीवन दर्शन में कहीं भी खामी अथवा कमी नहीं है।'

समीक्षा- आपने मांसाहार की बात करते-करते यह मधुमक्खी के छत्ते में हाथ डाल दिया है। कहाँ कुरान की अवैज्ञानिक, असम्भव गप्पें और कहाँ वर्तमान विज्ञान के उच्चस्तरीय सिद्धान्त? बिल्कुल 36 का आंकड़ा है। 'यह मुँह और मसूर की दाल' की कहावत पूर्णतः चरितार्थ आप पर हो रही है। इस विषय पर पृथक् से पुस्तक लिखी जा सकती है। यह लेख विस्तृत हो गया है और यह प्रसंग विषय से सर्वथा हटकर भी है, इस कारण इसका उत्तर देना उचित यहाँ प्रतीत नहीं होता। पुनरपि मेरा परामर्श है कि आप जरा विचार करके कुरान का भली प्रकार अध्ययन करके मेरे साथ चर्चा कर सकते हैं। हां, इतना तो अवश्य कहूँगा कि खुदा के कथन मात्र से सृष्टि-निर्माण, कहीं 6 दिन में सबका निर्माण, कहीं भूलकर 8 दिन बता देना, आकाश की खाल खींचना, आकाश को कागज की भाँति लपेटना, चन्द्रमा का लोहू के समान लाल होना, आकाश में बुर्ज होना, उसे समतल करना आदि वैज्ञानिक (?) तथ्यों को आपके मदरसे भले ही पढ़ावें, परन्तु इन्हें पढ़कर कोई भौतिक, खगोल वा

शरीर शास्त्र का वैज्ञानिक नहीं बन सकता। मस्जिद में कुछ पढ़ना, विद्यालय व प्रयोगशाला में दूसरा पढ़ना यह घोर दुर्भाग्य न केवल कुरान बल्कि बाईबिल तथा पुराणों के पढ़ने वालों के साथ जुड़ा हुआ है। आश्चर्य है कि इन ग्रन्थों को मानने वाले अपने–अपने पूर्वाग्रहों व हठ को त्यागने को तैयार नहीं होते।

परमपिता परमात्मा की कृपा से संसार के सभी मत पंथ वाले विज्ञान बुद्धि रखकर निष्पक्षता से विचार कर एकमेव सत्य हितकारी मार्ग पर चलकर मानव एकता के साथ सर्वप्राणिकल्याण का मार्ग प्रशस्त करें। इसी भावना व कामना के साथ

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आर्य जगत् 2 मई 2004
2. आर्य जगत् 28 दिसम्बर 1999
3. मेरा आहार मेरा स्वास्थ्य – डा. नागेन्द्रकुमार नीरज
4. मांस मनुष्य का भोजन नहीं – स्वामी ओमानन्द सरस्वती
5. ऋग्वेद
6. यजुर्वेद
7. अर्थववेद
8. शतपथ ब्राह्मण
9. महाभारत
10. वाल्मीकीय रामायण
11. सत्यार्थ प्रकाश
12. गोकरुणानिधि
13. रोगों की नई चिकित्सा – लुई कूने

14. ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास लेखक पं. युधिष्ठिर मीमांसक
15. वैदिक सम्पत्ति - पं. रघुनन्दन शर्मा
16. विज्ञान मासिक पत्रिका - फरवरी 2010
17. वेदों का यथार्थ स्वरूप - पं. धर्मदेव विद्या मार्तण्ड
18. वेदविज्ञान-आलोक - आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

विनम्र निवेदन

मान्यवर! आपने आचार्य जी के कार्य और महत्ता को भली प्रकार समझ लिया होगा, ऐसी आशा करते हैं। यदि आपके हृदय और मस्तिष्क वेद के इस अपूर्व कार्य के लिए उत्सुक हुए हों और हमें अपना सहयोग करना चाहें तो आप हमारे यज्ञ में निम्न प्रकार से सहयोगी बन सकते हैं-

1. प्रतिवर्ष न्यूनतम 12,000/- रूपये अथवा एक बार न्यूनतम एक लाख रूपये का दान करके सहयोगी संरक्षक बन सकते हैं। आपको न्यास की वार्षिक बैठक में, जो प्रायः वार्षिकोत्सव के अवसर पर हुआ करेगी, में विशेष अतिथिरूपेण आमन्त्रित किया जाता रहेगा।
2. प्रतिवर्ष न्यूनतम 6,000/- रूपये अथवा एक साथ न्यूनतम 50,000/- रूपये देकर विशेष आमन्त्रित सदस्य बन सकते हैं। आपको भी वार्षिक बैठक के अवसर पर अतिथि रूपेण आमन्त्रित किया जाता रहेगा।
3. वार्षिक न्यूनतम 1,000/- रूपये अथवा एक सौ मासिक देते रहकर सहयोगी सदस्य बन सकते हैं।

नोट- उपर्युक्त सभी सहयोगी महानुभावों को न्यास की C.A. द्वारा की हुई वार्षिक ऑडिट रिपोर्ट भेजी जाया करेगी। जो महानुभाव स्वयं दान नहीं कर सकें, वे दूसरों को प्रेरित करके कम से कम 8